भोजनके भलीभाँति पचने और उससे पूरी-पूरी शक्ति प्राप्त करनेके लिये हर एक ग्रासको अच्छी तरह चबाना और उसमें मुँहकी लारको मिलने देना उपयोगी ही नहीं, अत्यन्त आवश्यक है।

—इसी पुस्तकसे

पिताकी सीख
स्वास्थ्य
और
खानपान
लेखक
श्री हनुमानप्रसाद गोयल

निवेदन

श्रीगोयलजी बाल-मनोविज्ञानके पण्डित, बालशिक्षा-विषयके विज्ञाता और बाल-साहित्यके अनुभवी निर्माता हैं। इस पुस्तिकामें उनके कुछ परमोपयोगी लेखोंका संग्रह है। इसमें ऐसे विषयोंपर सरल भाषामें लिखा गया है जिनकी जानकारी सबके लिये—खास करके बालकोंके लिये परम आवश्यक है। इन विषयोंका ज्ञान हो जानेपर शरीर और स्वास्थ्यसम्बन्धी प्रायः सभी बातें जानी जा सकती हैं और किस प्रकारका आहार-विहार शरीर, स्वास्थ्य तथा मनके लिये उपयोगी है, इसे जानकर तदनुकूल आचरण करनेसे शरीर नीरोग, पुष्ट और दीर्घकालस्थायी होता है तथा मन शुद्ध होकर परमात्माकी ओर लगता है। आशा है इस पुस्तकसे सभी लाभ उठावेंगे। शिक्षा-विभाग इसे स्वीकार करके विद्यार्थियोंको भी इससे लाभ उठानेकी सुविधा कर दें तो और भी उत्तम है।

—प्रकाशक

श्रीहरिः

विषय-सूची

श्रीहरिः

पिताकी सीख

स्वास्थ्य और खान-पान

सृष्टिका कारीगर

पिता—बेटा केशव ! मेजपर वह जो गुलदस्ता रक्खा है, उसे देखते हो ?

केशव—जी हाँ, पिताजी !

पिता—उसे किसने बनाया ?

केशव—मालीने ! उसीने बागसे फूलोंको चुन-चुनकर उसे तैयार किया है।

पिता—शाबाश, ठीक है। अच्छा अब बताओ फूलोंको किसने बनाया ?

केशव—फूलोंको ? फूलोंको तो किसीने नहीं बनाया, पिताजी ! ये तो पेड़ोंपर खिले थे।

पिता—हाँ, पेड़ोंपर ये अवश्य खिले थे, लेकिन वहाँ इन्हें खिलाया किसने ? और फिर उन पेड़ोंको ही किसने पैदा किया ?

केशव—किसीने नहीं। पेड़ तो जमीनमें बीज बो देनेसे अपने-आप हो जाया करते हैं। उस दिन मैंने जो आम खाया था, उसकी गुठली बो दी थी। बस, उसमेंसे अंकुर

अपने-आप निकल आया और अब वह पौधा बन गया है।

पिता—सबसे पहले बीज किसने बनाये? अच्छा बताओ क्या वह गुलदस्ता कभी अपने-आप बन सकता था?

केशव—नहीं।

पिता—तब ये फूल, पेड़ और उसके बीज भी अपने-आप कैसे हो सकते हैं? इनका भी बनानेवाला कोई-न-कोई अवश्य होगा।

केशव—कौन है वह बनानेवाला?

पिता—वह बनानेवाला एक ऐसा कारीगर है, जिसकी कारीगरीको तो हम देखते हैं, परंतु कारीगरको नहीं देख पाते। लेकिन फिर भी वह हमारे पास हर समय और हर जगह मौजूद रहता है।

केशव—उसका नाम क्या है?

पिता—उसे हम भगवान्, ईश्वर या परमात्मा कहते हैं।

केशव—क्या वही ईश्वर, जिसका भजन ध्रुव और प्रह्लाद किया करते थे?

पिता—हाँ, वही ईश्वर! वह बड़ा भारी कारीगर है। उसने केवल पेड़ों और फूलोंको ही नहीं, उनके बीजोंको—यहाँतक कि दुनियाकी हर एक चीजको पैदा किया है। ये रंग-रंगके पक्षी और भाँति-भाँतिके पशु—सब उसीने बनाये हैं। रेंगनेवाले कीड़े और उड़नेवाले पतंगे भी उसीके बनाये गए हैं। उसीने नदीकी मछलियोंको बनाया और समुद्रके [illegible] पैदा किया। तुमको, हमको और सब मनुष्योंको भी

उसीने बनाया। उसीने सूर्यको बनाया, चन्द्रमाको बनाया और आकाशके तारोंको पैदा किया। उसीने आग, हवा और पानी बनाये और उसीने पृथ्वी तथा आकाशको भी जन्म दिया। कहाँतक कहें—बस, थोड़ेमें इतना समझ लो कि सृष्टिमें जो कुछ तुम्हें दिखायी देता है और जो नहीं भी दिखायी देता, वह सब उसीका बनाया हुआ है। वही इस सृष्टिका एकमात्र कारीगर है।

केशव—तब तो सचमुच वह बड़ा भारी कारीगर है। परंतु पिताजी! क्या हम उसे देख नहीं सकते?

पिता—देख सकते हैं, पर इन मामूली आँखोंसे नहीं। उसे देखनेके लिये हमें अपने भीतर मनमें आँखें पैदा करनी होंगी।

केशव—मनमें आँखें कैसे पैदा की जायँगी?

पिता—ईश्वरकी कृपाको प्राप्त करके, मनको निर्मल बनाकर और अपने आचरणोंको शुद्ध रखकर।

केशव—तो मुझे जैसा कहिये, मैं करनेको तैयार हूँ। ईश्वरकी कृपा कैसे प्राप्त हो सकती है?

पिता—इसके लिये मेरी सलाह यह है कि सबसे पहले तुम अपनी विचारशक्तिको काममें लाना सीखो और सृष्टिकी हरेक वस्तुमें उस ईश्वरकी कारीगरीको देखने और समझनेका अभ्यास करो। इससे तुम्हारी बुद्धि तेज होगी, ज्ञान बढ़ेगा और ईश्वरके प्रति सच्चा प्रेम उत्पन्न हो जायगा। बस, फिर

वही प्रेम आगे बढ़कर तुम्हारे मनको निर्मल कर देगा और आचरणोंको शुद्ध बना देगा। साथ ही प्रेममें वह शक्ति है जो दो व्यक्तियोंको आपसमें खींचकर मिला दिया करती है। गोस्वामी तुलसीदासजीने भी लिखा है—

'जेहि कर जेहि पर सत्य सनेहू। सो तेहि मिलइ न कछु संदेहू॥'

अस्तु, जैसे-जैसे तुम्हारा प्रेम ईश्वरके प्रति बढ़ता जायगा, वैसे-ही-वैसे उसका भी प्रेम तुम्हारे ऊपर बढ़ता जायगा। इस प्रकार धीरे-धीरे तुम ईश्वरके निकट और ईश्वर तुम्हारे निकट आता जायगा। अन्तमें जब तुम्हारा प्रेम उस दर्जेतक पहुँच जायगा, जहाँ ईश्वरके सिवा और किसी चीजका ध्यान ही नहीं रहता, तब तुम देखोगे कि तुम्हारे मनमें ईश्वरका स्वरूप इस प्रकार झलकने लगा है जैसे एक साफ आइनेमें चन्द्रमाका स्वरूप। इस प्रकार तुम्हें ईश्वरका दर्शन हो जायगा। बड़े-बड़े ऋषि, मुनि और ईश्वरभक्तोंने भी उसके इसी प्रकार दर्शन किये हैं। एक बार ईश्वरका दर्शन कर लेनेपर फिर मनुष्यको किसी चीजकी चाहना नहीं रह जाती और वह जीवन्मुक्त हो जाता है, अर्थात् वह संसारके तमाम बन्धनोंसे छूट जाता है।

केशव—लेकिन पिताजी! हमारा प्रेम यदि उस दर्जेतक न पहुँचे तब क्या होगा?

पिता—तब भी तुम्हारा कल्याण ही होगा। इस प्रकारके कभी व्यर्थ नहीं जाते। जितना गहरा ईश्वरके प्रति

तुम्हारा प्रेम होगा, उतना ही ऊँचा और सफल तुम्हारा जीवन भी बन जायगा।

केशव—ठीक है, अब मैं समझ गया।

पिता—अच्छा तो आज मैं तुम्हें एक छोटा-सा गीत ईश्वरकी प्रार्थनाके लिये सिखाता हूँ। इसे समझो और याद कर लो। और अभी कुछ दिनतक रोज संध्या और सवेरे इसीको गाकर उसकी प्रार्थना किया करो। गीत यह है—

(१)

हे ईश्वर! यह अद्भुत सारी।
कैसी कारीगरी तुम्हारी॥
सूरज चन्द्र और ये तारे।
हैं आकाशमें दीपक बारे॥
बादल भी ये सभी रँगीले।
सुर्ख सुनहरे नीले पीले॥
दिखलाये शोभा नित न्यारी।
कैसी कारीगरी तुम्हारी॥

(२)

माली बीज बागमें बोता।
उससे पेड़ बड़ा-सा होता॥
डालें फूल-फूल फल लातीं।
जिनमें लाखों बीज जमातीं॥
एक बीजका अचरज भारी।
कैसी कारीगरी तुम्हारी॥

(३)

जो-जो हम पदार्थ हैं खाते।
स्वाद जीभपर वे दिखलाते॥
फिर वे आँतोंमें हैं जाते।
लोहू बनते ताकत लाते॥

अद्भुत है मशीन बलिहारी!
कैसी कारीगरी तुम्हारी॥

हे प्रभु! हमपर दया दिखाओ।
बुद्धि हमारी शुद्ध बनाओ॥
मुझमें अपना प्रेम जमाओ।
शरण तुम्हारी हूँ, अपनाओ॥

आँख खोलती रहे हमारी।
भगवन्! कारीगरी तुम्हारी॥

केशव—इसे तो मैं बड़ी आसानीसे याद कर लूँगा और इसीको गाकर रोज प्रार्थना किया करूँगा।

पिता—और जिस तरह ईश्वरकी कारीगरीके कुछ नमूने इसमें दिखाये गये हैं, उसी तरह दूसरी चीजोंमें भी उसकी कारीगरीके नमूने देखने आरम्भ करो।

केशव—हाँ, हाँ अवश्य करूँगा।

हमारी स्वास्थ्य-रक्षक सेना

केशव—पिताजी ! माताजीको बुखार आ गया है। चारपाईपर पड़ी हैं।

पिता—बुखार न आये तो क्या हो। इतनी बार उन्हें समझा चुका, वह अपने स्वास्थ्यपर ध्यान देतीं ही नहीं।

केशव—स्वास्थ्य किसे कहते हैं, पिताजी !

पिता—जब हमारे शरीरके हरेक कल-पुर्जे अपना-अपना काम ठीक ढंगपर करते रहते हैं, तब उस अवस्थाको हम स्वास्थ्य कहते हैं। जब वे अपना काम ठीक ढंगपर नहीं करते या उनमें कोई खराबी पैदा हो जाती है, तब उसे हम रोग या बीमारीके नामसे पुकारते हैं।

केशव—पिताजी ! बीमारी कैसे पैदा होती है ?

पिता—बीमारियाँ बहुत तरहकी होती हैं; और उनके पैदा होनेके कारण भी बहुतेरे हैं; किंतु मोटे तौरसे हम कह सकते हैं कि कुछ बीमारियाँ तो ऐसी हैं जो खान-पान या रहन-सहनकी खराबियोंसे पैदा हो जाती हैं—जैसे अपच, मंदाग्नि, बात, गठिया, सिरका दर्द, पेटका दर्द, कब्जियत इत्यादि; और कुछ ऐसी हैं जो छुतही हैं, अर्थात् छूतसे पैदा होती हैं—जैसे प्लेग, हैजा, चेचक, सर्दी-जुकाम, इन्फ्लुएंजा, क्षय इत्यादि।

केशव—ये छूतकी बीमारियाँ किस तरह पैदा होती हैं ?

पिता—छूतसे पैदा होनेवाली बीमारियाँ वास्तवमें छोटे-छोटे कीड़ोंसे उपजती हैं। ये कीड़े इतने छोटे होते हैं कि साधारण आँखोंसे दिखायी नहीं देते। इसीसे इन्हें कीटाणु कहकर पुकारते हैं। इन्हें देखनेके लिये एक ऐसे यन्त्रकी आवश्यकता होती है, जो छोटी-छोटी चीजोंको बड़ा करके दिखा दे।

केशव—वह यन्त्र कौन-सा है ?

पिता—उस यन्त्रको अणुवीक्षण यन्त्र कहते हैं। उसके द्वारा हम छोटी-से-छोटी वस्तुको भी बिल्कुल आसानीके साथ देख सकते हैं। ये यन्त्र कई प्रकारके होते हैं—कोई कम शक्तिका और कोई ज्यादा शक्तिका। जो यन्त्र जितनी ही ज्यादा शक्तिका होगा उससे उतना ही बारीक चीज देखी जा सकेगी। रोगके कीटाणुओंको देखनेके लिये बहुत तेज शक्तिके यन्त्रोंकी जरूरत हुआ करती है, क्योंकि ये कीटाणु बहुत ही सूक्ष्म होते हैं।

केशव—अच्छा, तो ये कीटाणु होते कैसे हैं ?

पिता—ये कीटाणु अनेक प्रकारके होते हैं, किंतु अधिकतर ये तीन ही रूपोंमें दिखायी दिया करते हैं—(१)* पहियेकी तरह गोल आकारमें, (२)† डंडीकी तरह लंबे और (३)‡ लहरियेदार या उमेठनदार शकलमें।

* Coccus † Bacillus ‡ Spirillum.

इनकी बहुत-सी जातियाँ हैं और उनके रूप-रंग और स्वभावके अनुसार अलग-अलग नाम भी हैं, किंतु तुम्हें उस झगड़ेमें पड़नेकी जरूरत नहीं। केवल इतना ही समझ लो कि जितने भी प्रकारके छुतहे रोग होते हैं—अर्थात् सर्दी और जुकाम-जैसे साधारण रोगोंसे लेकर क्षय, चेचक, हैजा और प्लेग-जैसे भयंकर रोगोंतक—सबकी उत्पत्तिके लिये अलग-अलग जातिके कीटाणु हुआ करते हैं।

केशव—लेकिन इन कीटाणुओंसे रोग कैसे होता है ?

पिता—बात यह है कि इन कीटाणुओंमें अपनी संख्याको बढ़ानेकी बड़ी विचित्र शक्ति हुआ करती है। हर एक कीटाणु अपने शरीरको बढ़ाकर दो टुकड़े कर देता है, जिससे एककी जगह दो कीटाणु बन जाते हैं। इस प्रकार क्षणभरमें ही इनकी संख्या दुगुनी हो जाती है। हमारे शरीरमें यदि इनमेंसे एक भी कीटाणु किसी तरह प्रवेश कर पाये और उसकी बाढ़के लिये परिस्थिति बिल्कुल अनुकूल हो तो उससे इसी तरह एकसे दो, दोसे चार और चारसे आठ होते हुए कुछ ही समयमें करोड़ों कीटाणु पैदा हो जायँगे और हमारे शरीरके अंदर उनकी एक भारी बस्ती तैयार हो जायगी।

केशव—तब उससे क्या होगा ?

पिता—बस, फिर वे तमाम कीटाणु हमारे खूनके साथ मिलकर सारे शरीरमें चक्कर लगाने लगेंगे और खूनमें अपना जहर भरकर हमारे शरीरके पेंचीले और सुकुमार पुर्जोंमें तरह-

तरहकी खराबियाँ पैदा कर देंगे, जिससे हम बीमार पड़ जायँगे।

केशव—लेकिन पिताजी! ये रोगके कीटाणु हमारे शरीरमें पहुँच कैसे जाते हैं?

पिता—इनकी पहुँच हमारे शरीरमें अनेक प्रकारसे हो सकती है। कुछ तो हवामें उड़कर साँसके साथ आ जाते हैं; कुछ दूध, जल या भोजनके साथ मिलकर अंदर पहुँच जाते हैं और कुछ रोगी मनुष्यके पहने हुए वस्त्रोंसे चिपककर एकके पाससे दूसरेके पास जा पहुँचते हैं। कुछ कीटाणु ऐसे भी हैं जो किसी खास किस्मके जानवरके काटनेसे ही हमारे खूनमें पहुँच जाते हैं।

केशव—तब इनसे बचनेका उपाय क्या है?

पिता—इनसे बचनेका सबसे बड़ा उपाय तो उस परम पिता परमात्माने ही हमारे शरीरके भीतर कर रक्खा है। उसने हमारे अंदर करोड़ों सिपाहियोंकी एक ऐसी सेना पैदा कर दी है, जो हर समय हमारे शरीरकी रखवाली किया करती है और शरीरके एक सिरेसे दूसरे सिरेतक दिन-रात चक्कर लगा-लगाकर पहरा दिया करती है। जहाँ कोई शत्रु हमारे भीतर घुसा कि इस सेनाके बहुत-से सिपाही झट उसपर टूट पड़ते हैं और उसे मार-मारकर बाहर निकालनेकी चेष्टामें लग जाते हैं।

केशव—ओहो! ये सिपाही कौन हैं?

पिता—ये हमारे खूनके सफेद कण हैं। हमारे खूनमें दो प्रकारके अत्यन्त नन्हे-नन्हे जीवाणु पाये जाते हैं—एक लाल और दूसरे सफेद। इनकी शकल पहियोंकी तरह घेरेदार हुआ करती है। ये हमारे खूनके जीवित कण हैं और खूनके साथ-साथ सारे शरीरमें चक्कर लगाया करते हैं। इनमेंसे लाल कणोंका काम शरीरके तमाम अङ्गोंको भोजन ढो-ढोकर पहुँचाना है और सफेद कणोंका काम शरीरकी रक्षा करना है। बहुत छोटे होनेके कारण आँखोंसे ये नहीं दिखायी देते, किंतु अणुवीक्षण यन्त्रकी सहायतासे हम इन्हें जब चाहें देख सकते हैं। जिस समय किसी रोगके कीटाणु हमारे खूनमें पहुँचते हैं तो ये सफेद कण हमारी रक्षाके लिये उनसे बड़ी तत्परताके साथ जा भिड़ते हैं और फिर कुछ समयतक उन दोनोंमें एक खासी कुश्ती होती रहती है। यदि हमारे सफेद कण रोगके कीटाणुओंसे शक्ति और संख्यामें बलवान् हुए तो वे इन्हें तुरंत नष्ट कर डालते हैं या कम-से-कम इनकी बाढ़को ही रोक रखते हैं, जिससे हमारे शरीरको किसी तरहकी हानि नहीं पहुँचने पाती। वास्तवमें हमें यह भी नहीं मालूम होता कि हमारे शरीरमें किसी रोगके कीटाणुओंने प्रवेश भी किया था या नहीं। किंतु यदि हमारे सफेद कण इनसे कमजोर पड़े तो फिर वे स्वयं नष्ट होने लगते हैं और रोगके कीटाणु तेजीके साथ बढ़कर सारे शरीरपर अपना अधिकार जमा लेते हैं, जिससे हम बीमार पड़ जाते हैं।

केशव—ये बातें सुननेमें बड़ी अद्भुत जान पड़ती हैं।

पिता—हाँ, लेकिन हैं ये बिल्कुल सच। हम बहुधा देखते हैं कि कोई आदमी तो छुतहे रोगीके पास दिन-रात सोता-बैठता है और उसकी सेवा किया करता है, लेकिन फिर भी बीमार नहीं पड़ता और कोई केवल दस-पाँच मिनटके लिये वहाँ रोगीका हाल-चाल देखने आता है और घर पहुँचते ही बीमार पड़ जाता है। इसका कारण क्या है? रोगके छुतहे कीटाणु तो दोनोंहीके शरीरमें प्रवेश करते हैं, किंतु पहला आदमी बीमार नहीं पड़ता; क्योंकि उसके खूनमें सफेद कण रोगके कीटाणुओंसे अधिक बलवान् हैं और इसलिये उन्हें रोक रखते हैं। दूसरा आदमी बीमार पड़ जाता है, क्योंकि उसके खूनमें सफेद कण उतने मजबूत नहीं हैं और उन कीटाणुओंको दबा नहीं सकते।

केशव—तब इन सफेद कणोंको बलवान् बनानेका उपाय क्या है?

पिता—इन्हें बलवान् बनानेका सबसे सुन्दर और सीधा उपाय यह है कि हम बराबर ऐसे नियमोंका पालन करते रहें, जिनसे हमारे शरीरका बल और मनकी शक्ति बराबर बढ़ती जाय। इसके लिये सबसे पहले हमें अपने खान-
और रहन-सहनको ठीक रास्तेपर रखना होगा।

केशव—खान-पान हमें कैसा रखना चाहिये ?

पिता—खान-पानका सवाल हमारे शरीर और स्वास्थ्यके लिये बड़े महत्त्वका है। तुम जानते हो कि जो कुछ तुम खाते हो उसीसे तुम्हारा खून बनता है, उसीसे तुम्हारा बल बढ़ता है और उसीसे तुम्हारा शरीर भी बड़ा होता है। जन्मके समय तुम्हारा शरीर कैसा नन्हा-सा था, किंतु आज यह इतना बड़ा हो गया। उस समय तुम उठकर बैठ भी नहीं सकते थे, परंतु आज तुम उछल-कूदकर छलाँगें मार सकते हो। अब तुम्हीं सोचो कि यह ऐसा शरीर और इतना बल तुमने कहाँसे पाया। भोजनसे ही न ? अस्तु, हम क्या खायँ और कैसे खायँ, इस विषयमें हमें सदैव सावधान रहना चाहिये। अवसर मिलनेपर किसी दिन इसकी बाबत हम तुम्हें अधिक विस्तारसे समझायेंगे। अभी केवल इतना ही समझ लो कि हमारे खाने-पीनेकी चीजें सदा ऐसी होनी चाहिये, जो बल और स्वास्थ्यको बढ़ानेवाली हों और आसानीसे पच सकें।

केशव—ये चीजें कौन-सी हैं ?

पिता—ताजे फल, दूध, मक्खन और मेवोंका स्थान इस विचारसे सबसे ऊँचा है। इनके बाद रोटी, दाल, भात, तरकारी, शाक और घीका नंबर आता है। पूड़ी, मिठाई, पकवान, चाट और दही-बड़े आदिका नंबर तो बहुत नीचे है;

क्योंकि ये चीजें अधिक देरमें पचती हैं और शरीरकी अपेक्षा केवल जीभको ही ज्यादा सुख देनेवाली हैं। किंतु ध्यान रहे कि उत्तम भोजन भी जरूरतसे ज्यादा या बेवक्त खा लेनेसे विषके समान हो जाता है। साथ ही जो भोजन खूब चबाकर नहीं खाया जाता, वह भी पेटके लिये बोझ बन जाता है। सड़ा, गला, बासी या देरका रक्खा हुआ भोजन भी हर्गिज न खाना चाहिये। ऐसा भोजन तामसी कहा गया है और शरीरके साथ-साथ हमारी बुद्धिको भी भ्रष्ट कर देता है।

केशव—मैं इन बातोंपर ध्यान रक्खूँगा।

पिता—हाँ, और साथ ही हमें अपने रहन-सहनपर भी ध्यान रखना होगा।

केशव—वह क्या ?

पिता—वह है मुख्यतः सफाई और सदाचार। ये दोनों ही बातें स्वास्थ्यकी दृष्टिसे भोजनसे कम महत्त्व नहीं रखतीं। सफाईके अंदर भोजनकी सफाई, पानीकी सफाई, हवाकी सफाई, शरीरकी सफाई, वस्त्रोंकी सफाई, घर-द्वारकी सफाई और पास-पड़ोसकी भी सफाई शामिल है। इनके अतिरिक्त मन, स्वभाव और चरित्रकी स्वच्छता भी सदाचारके अंदर आ जाती है। इस प्रकार अपने रहन-सहनमें हमें सब प्रकारकी सफाई और निर्मलता लानेकी जरूरत है। याद रहे कि जितने भी प्रकारके रोग और रोगके कीटाणु हैं, सब गंदगीमें

ही पनपते हैं। सफाई और प्रकाशमें उनकी बाढ़ और शक्ति क्षीण हो जाती है। साथ ही सफाई और प्रकाश हमारे खूनके कणोंको बल देते हैं। इससे हममें रोगोंको रोकनेकी शक्ति आती है। इस प्रकार सफाई हमारी दो तरहसे सहायक है। एक ओर तो वह हमारी शक्तिको बढ़ाती है और दूसरी ओर वह हमारे शत्रुओंकी शक्तिको क्षीण करती है। अतएव इसका साथ हमें जीवनपर्यन्त छोड़ना उचित नहीं।

केशव—परंतु पिताजी! मन और चरित्रकी सफाईसे स्वास्थ्यका क्या सम्बन्ध?

पिता—देखो, जिस प्रकार बाहरी सफाईसे शरीरको शक्ति मिलती है, उसी प्रकार मन और चरित्रकी स्वच्छतासे मनको भी शक्ति प्राप्त होती है। और मन है शरीरका राजा। उसीके कहनेपर शरीर चलता है। अतएव यदि मन कमजोर हुआ तो फिर शरीरपर वह अपना काबू नहीं रख सकता और न उससे स्वास्थ्यके नियमोंका ठीक-ठीक पालन ही करा सकता है। तुमने सुना होगा कि यूरोपमें कितने ही चिकित्सक रोगीको केवल यह विश्वास दिलाकर अच्छा कर देते हैं कि तुम अब अच्छे हो। जिस रोगीके मनमें जितना ही मजबूत यह विश्वास जम जाता है, उतना ही जल्दी वह अच्छा भी हो जाता है। कहनेका मतलब यह कि शरीरका मनके साथ बहुत ही घना सम्बन्ध है। अतएव शरीरके स्वास्थ्यके लिये मनकी शक्ति, जिसे हम इच्छा-शक्ति भी

कहते हैं, बहुत आवश्यक है; और यह शक्ति उन लोगोंको आसानीसे प्राप्त हो जाती है, जिनका मन निर्मल है और जो चरित्रवान् हैं।

केशव—तो मन और चरित्रको निर्मल रखनेके लिये उपाय क्या है?

पिता—इसका सबसे सीधा उपाय यह है कि बुरे और गंदे विचारवाले लोगोंकी संगतसे बचो, पवित्र और ऊँचे विचारवाले लोगोंका सत्सङ्ग करो, बुद्धि और ज्ञानको बढ़ानेवाली पुस्तकें पढ़ो और अपने मनमें हर एक बातपर स्वतन्त्ररूपसे सोचनेकी आदत डालो। जब कभी तुम्हारा मन भटककर किसी बुरे रास्तेपर जाना चाहे तो उसे पूरी शक्तिसे रोको और उसके परिणामोंपर विचार करो। साथ ही ईश्वरसे प्रार्थना करो कि वह तुम्हारे मनको इतनी शक्ति दे कि तमाम बुरे विचारोंसे तुम अपनेको दूर रख सको।

केशव—मैं अवश्य ऐसा ही करूँगा। आज मैंने कितनी ही नयी बातें सीखीं। मैं इन सबोंको ध्यानमें रक्खूँगा।

पिता—यदि आजकी बतायी हुई तमाम बातोंको तुम ध्यानमें रक्खोगे और उनके अनुसार चलनेकी चेष्टा करोगे तो ईश्वर अवश्य तुम्हारा कल्याण करेगा और शारीरिक स्वास्थ्यके साथ-साथ मनका स्वास्थ्य और शक्ति भी तुम लाभ करोगे।

सिगरेट, बीड़ी या तम्बाकूकी लत

पिता—केशव ! यहाँ जली हुई बीड़ी कौन छोड़ गया है ?

केशव—मजदूरिनका छोकरा रमुआ पी रहा था। वही डाल गया होगा। कल आयेगा तो उसकी खबर लूँगा।

पिता—नहीं-नहीं, खबर लेनेकी जरूरत नहीं। जैसे तुम बच्चे हो उसी तरह वह भी एक बच्चा है। और फिर जूठी बीड़ी छोड़ जाना कोई ऐसा भारी अपराध भी नहीं। दुःख तो इस बातका है कि अभी इस नन्ही-सी अवस्थासे ही उसके मुँह यह जहर लग गया।

केशव—क्या बीड़ी जहर है ?

पिता—हाँ, जहर तो है ही। बीड़ी, सिगरेट, सिगार, चिरुट और हुक्का सभी जहरीली चीजें हैं। ये सब तम्बाकूके पत्तोंसे बनती हैं और तम्बाकूके पत्तेमें एक प्रकारका जहर होता है, जिसे अंग्रेजीमें 'निकोटिन' (Nicotine) कहते हैं।

केशव—यह कैसा जहर है ?

पिता—यह ऐसा जहर है कि केवल एक बूँदसे ही बड़ी-बड़ी बिल्लियोंको एक मिनटमें मार डालता है और खरगोश इससे तीन मिनटमें मर जाते हैं। मनुष्यके शरीरपर भी

इसका बड़ा घातक परिणाम होता है। कई आदमी तो तम्बाकूके पत्तोंका काढ़ा शरीरभरमें लेप करनेसे ही केवल तीन घंटेके अंदर मर गये हैं और कितने ही सैनिक युद्धकार्यसे बचनेके लिये अपने पेट या बगलमें तम्बाकूका पत्ता बाँधते और जान-बूझकर बीमार होते देखे गये हैं। इसीसे समझ सकते हो कि तम्बाकू कैसी जहरीली चीज है।

केशव—लेकिन पिताजी! तम्बाकू तो बहुत-से लोग पीते या खाते हैं, परंतु वे तो बीमार नहीं पड़ते और न मरते ही हैं।

पिता—बात यह है कि हर एक जहरकी क्रिया उसकी मात्रापर और मनुष्यके अभ्यासपर निर्भर रहती है। यदि अधिक मात्रामें एकबारगी सेवन किया जाय तो अवश्य इससे तत्काल मृत्यु हो जायगी, किंतु थोड़ी-थोड़ी मात्रामें अभ्यास बढ़ाकर नित्य सेवन किया जाय तो मृत्यु तो न होगी, परंतु कुछ ऐसी स्थायी खराबियाँ शरीर या मस्तिष्कके अंदर पैदा हो जायँगी, जिनसे जीवनभर पीछा नहीं छूट सकता। उदाहरणके तौरपर अफीमको ही ले सकते हो। सब जानते हैं कि अफीम एक प्रकारका विष है। और बहुत-से लोग इसे अधिक मात्रामें खाकर प्राण गँवा चुके हैं; किंतु अफीमची इसे अपनी बँधी हुई मात्रामें रोज ही खाया करता है और फिर भी नहीं मरता। हाँ, उसका शरीर अवश्य सूखकर काँटा बन जाता है और उसका

मस्तिष्क किसी दूसरी दुनियामें चक्कर लगाया करता है, जिसे इस दुनियाके लोग 'पीनक' कहते हैं। ठीक वही नियम तम्बाकूके लिये भी लागू है। तम्बाकू भी एक प्रकारका विष है और इसे भी यदि अत्यधिक मात्रामें एकबारगी सेवन किया जाय तो चक्कर, बेहोशी और अन्तमें मृत्युतक उपस्थित हो सकती है, किंतु थोड़ी-थोड़ी मात्रामें नित्य सेवन करने और अभ्यास बढ़ानेसे मृत्यु तो नहीं होती, पर शरीर और मनका स्वास्थ्य सदाके लिये बिगड़ जाता है।

केशव—तो क्या रोज तम्बाकू पीनेसे शरीरमें रोग पैदा हो जाते हैं?

पिता—हाँ, अवश्य। कुछ रोग तो स्वयं इससे पैदा होते हैं और कुछ दूसरे रोगोंके लिये शरीरमें रास्ता खुल जाता है।

केशव—कैसे?

पिता—देखो, सिगरेट, बीड़ी, सिगार, चिरुट या हुक्का—चाहे जो पिया जाय, सबमें केवल जलती हुई तम्बाकूका धुआँ ही पीना पड़ता है; और यह जहरीला धुआँ बारम्बार अपने श्वासके साथ खींच-खींचकर फेफड़ोंमें भरना होता है। सबसे पहले तो जहाँ-जहाँ यह धुआँ अंदरकी दीवारोंसे छू जाता है वहाँ-वहाँ प्रदाह अर्थात् जलन उत्पन्न कर देता है, जिससे गलेमें पीड़ा, स्वरमें भारीपन, सूखी खाँसी, हँफनी, दमा इत्यादि रोग पैदा हो जाते हैं। साथ ही ये प्रदाहयुक्त स्थान उन तमाम छुतहे रोगोंके लिये

भी रास्ता खोल देते हैं, जिनके कीटाणु हवामें नित्य उड़-उड़कर श्वासद्वारा अंदर पहुँचते रहते हैं और उन प्रदाहयुक्त स्थानोंमें अपना अड्डा आसानीसे जमा सकते हैं। इस प्रकारके छुतहे रोगोंमें क्षयका रोग सबसे भयंकर है!

केशव—मैं समझ गया, तम्बाकू बहुत बुरी चीज है।

पिता—हाँ, परंतु अभी तुमने इसकी केवल थोड़ी ही-सी बुराइयाँ सुनी हैं। इसका सबसे बुरा प्रभाव तो मनुष्यके स्नायु-संस्थानपर पड़ता है।

केशव—स्नायु-संस्थान क्या चीज है?

पिता—यह हमारे शरीरमें एक प्रकारकी अद्भुत तारबर्की है। तुम जानते हो कि जब कोई जरूरी संदेशा दूर देशको भेजना होता है तब उसे चिट्ठी न भेजकर तारसे भेजते हैं। इसके लिये बहुत-से बिजलीके तार हमारे तारघरसे दूर-दूरके शहरोंतक चारों ओर लगे हुए हैं, जिनके द्वारा हर जगहके समाचार हमारे तारघरमें नित्य आया-जाया करते हैं। ठीक इसी प्रकारके, किंतु इनसे बहुत सूक्ष्म और ऊँचे दर्जेके सजीव तार हमारे सम्पूर्ण शरीरमें बिछे हुए हैं। इनका केन्द्र अर्थात् मुख्य तारघर हमारा मस्तिष्क है, जो हमारे मनका निवासस्थान भी है। यहींसे शरीरके प्रत्येक स्थानका संदेशा इन्हीं सजीव तारोंद्वारा बराबर आया-जाया करता है और यहींसे शरीरके सम्पूर्ण कार्यकी व्यवस्था भी की जाती है। उदाहरणके तौरपर यदि तुम्हारा हाथ किसी

जलते हुए कोयलेसे छू जाय तो तुम झट हाथको वहाँसे हटा लेते हो। यह क्यों? बात यह है कि जो तार या स्नायु मस्तिष्कसे आकर तुम्हारे हाथकी खालतक फैले हुए हैं, उन्होंने ज्यों ही उस जलते हुए कोयलेको स्पर्श किया, त्यों ही उसकी खबर मस्तिष्कतक पहुँचा दी। मस्तिष्कने भी तत्काल उसी हाथकी मांसपेशियोंतक जानेवाले तारोंसे मांसपेशियोंको आज्ञा भेजी कि हाथको वहाँसे हटा लो। निदान मांसपेशियाँ सञ्चालित हुईं और वह हाथ वहाँसे हट गया। यह सब कहनेमें तो बहुत समय लगता है, किंतु मस्तिष्कतक खबर पहुँचने और उसके आज्ञानुसार काम होनेमें क्षणभरका भी समय नहीं लगता। इसी प्रकार हम आँखोंसे जो कुछ देखते हैं, कानोंसे जो कुछ सुनते हैं, नाकसे जो कुछ सूँघते हैं, जीभसे जो कुछ स्वाद लेते हैं और शरीरसे जो कुछ छूते हैं—उन सबका ज्ञान इन्हीं तारों (अर्थात् स्नायुओं) द्वारा हमारे मस्तिष्कतक पहुँचता रहता है। अस्तु, शरीरके एक छोरसे दूसरे छोरतक फैले हुए इन्हीं तमाम तारोंके समूहको 'स्नायु-संस्थान' के नामसे पुकारते हैं और तारोंको 'स्नायु' कहते हैं। हमारी सम्पूर्ण ज्ञानशक्ति और कार्यशक्ति इन्हीं स्नायुओंपर अवलम्बित हैं। यदि किसी अङ्गके ये स्नायु काट दिये जायँ तो वह अङ्ग हमारे लिये मुर्दा-सा हो जायगा। जैसे यदि हाथकी ओर जानेवाले सम्पूर्ण स्नायु काट दिये जायँ फिर हाथ चाहे जलकर राख ही क्यों न हो जाय

किंतु हमें न तो उससे पोड़ा होगी और न हम हाथको आगसे हटा ही सकेंगे। यही हाल हमारे सब अङ्गोंका है, चाहे वे बाहरी अङ्ग हों—जैसे हाथ, पैर, आँख, कान, नाक, मुँह इत्यादि और चाहे वे भीतरी अङ्ग हों—जैसे हृदय, यकृत, पेट, प्लीहा, गुर्दे इत्यादि। सबकी क्रिया और ज्ञानशक्ति अपने-अपने स्नायुओंपर ही अवलम्बित है। मस्तिष्कको इन सब स्नायुसमूहोंका मूलस्थान अर्थात् जड़ समझना चाहिये। यहाँ जो गूदा है वह स्नायुओंका भण्डार है और उसीमें हमारे सोचने-विचारनेकी शक्ति, समझनेकी शक्ति, स्मरण-शक्ति, इच्छा-शक्ति, कल्पना-शक्ति, आविष्कार-बुद्धि और सभी प्रकारकी बुद्धि तथा निश्चयोंका निवासस्थान है। थोड़ेमें यह कह सकते हो कि हमारे स्नायुओंमें ही हमारा जीवन है और उनके विना यह शरीर बस, हाड़-मांसका एक ढेरमात्र रह जायगा। परंतु ये स्नायु होते हैं बड़े सुकुमार और सूक्ष्मग्राही। इनपर हमारे छोटे-से-छोटे कार्यों और आदतोंका भी प्रभाव पड़े विना नहीं रहता। अतएव स्वस्थ और सुखी जीवन बितानेके लिये इनकी बहुत सम्हाल करनेकी जरूरत है।

केशव—तम्बाकूका इन स्नायुओंपर क्या प्रभाव पड़ता है?

पिता—तम्बाकू इन स्नायुओंको कमजोर और कुण्ठित बना देती है। फेफड़ोंमें पहुँचकर तम्बाकूका जहरीला धुआँ पहले सीधे हमारे खूनमें मिलता है, जिससे हमारा खून

शुद्ध और साफ होनेके बजाय तम्बाकूके जहरसे भर उठता है। बादमें यह जहर खूनके साथ-साथ सम्पूर्ण शरीरमें पहुँचता है, जिससे हर जगहके स्नायु-संस्थान प्रभावित होते हैं और हर एक अङ्गकी क्रिया एवं शक्तिपर आघात पहुँचता है। उदाहरणार्थ फेफड़ोंसे होकर जब यह जहरीला खून हृदयमें पहुँचता है तब वहाँके स्नायुओंको खराब करके बहुधा हृदयकी दुर्बलता और धड़कन आदि रोगोंको जन्म देता है। अधिक तम्बाकू पीनेवालोंकी यदि नाड़ी देखी जाय तो वह अनियमितरूपसे चलती हुई जान पड़ेगी, जो इस बातकी प्रत्यक्ष सूचना है कि हृदयका काम ठीक ढंगपर नहीं हो रहा है। इसके बाद वह जहरीला खून शरीरके अन्य भागोंमें जाता है और वहाँ भी तरह-तरहकी खराबियाँ पैदा करता है। पेटमें जाकर पेटके स्नायुओंको बिगाड़ता है, जिससे अजीर्ण और अग्निमांद्य रोग घेर लेते हैं; मस्तकमें पहुँचकर मस्तिष्कको कुण्ठित करता है, जिससे चित्तकी एकाग्रता चली जाती है, विचारशक्ति घट जाती है, स्मरणशक्ति लुप्त हो जाती है, सिर चक्कर करता है और नींद कम पड़ती है। कभी-कभी अत्यधिक सिगरेट या सिगार पीनेवालोंको एक प्रकारका नेत्ररोग भी हो जाता है, जिसे डाक्टरी भाषामें 'तम्बाकू-ऐम्ब्लीओपिया' (Tobaccoampeyopia) कहते हैं। यह रोग तम्बाकू पीनेवालोंकी आँखोंके मूल-स्नायु (optic nenve) में प्रदाह

होनेके कारण पैदा होता है और आँखके डाक्टरोंको इसके रोगी बहुधा मिला करते हैं, क्योंकि तम्बाकूका प्रचार इन दिनों बेहद बढ़ा हुआ है। इसी प्रकार नाक, कान और जीभके स्नायु-संस्थान भी तम्बाकू पीनेसे कुण्ठित और खराब हो जाते हैं, जिससे इन स्थानोंकी ज्ञानशक्ति धीमी पड़ जाती है अर्थात् सिगरेट, बीड़ी या तम्बाकू पीनेवालोंको जीभसे बहुत हल्का स्वाद, नाकसे बहुत हल्की गन्ध और कानसे बहुत हल्के शब्द नहीं समझ पड़ते। हाथ और पैर भी इनके उत्तम रीतिसे काम नहीं करते। इसीलिये सुनते हैं कि अमरीकाके दफ्तरोंमें क्लर्कोंकी भर्तीके समय प्रत्येक व्यक्तिसे पूछा जाता है कि वह तम्बाकू तो नहीं पीता, क्योंकि तम्बाकू पीनेवालोंके लेख सुन्दर नहीं होते। इसी प्रकार अन्ताराष्ट्रिय दौड़की प्रतियोगितामें भाग लेनेवाले भी प्रायः तम्बाकू पीनेकी आदत महीनों पहलेसे छोड़ रखते हैं। कहाँतक कहें, थोड़ेमें यह समझ लो कि शरीरका कोई भी ऐसा भाग नहीं है, जो तम्बाकूके जहरीले आघातसे अछूता बचे।

केशव—तो फिर लोग तम्बाकू पीते क्यों हैं ?

पिता—यह तो मेरे लिये भी अबतक एक आश्चर्य ही बना रहा। मैं भी अबतक यह ठीक-ठीक नहीं समझ पाया कि तम्बाकू-जैसी एक कड़वी, दुर्गन्धयुक्त और जहरीली वस्तुको लोग क्यों इस प्रकार अपने मुँह लगानेके लिये दीवाने बने रहते हैं और क्यों इससे मुँहको गंदा करके स्वास्थ्यको नष्ट

करनेके हेतु अपनी गाढ़ी कमाईका पैसा इस प्रकार शौकसे फेंक दिया करते हैं। कुछ भोले-भाले आदमियोंको यह कहते अवश्य सुना है कि तम्बाकू पीनेसे या खानेसे बादी पच जाती है, दाँतकी जड़ें मजबूत होती हैं और दस्त साफ होता है। किंतु यह कोरी दन्तकथा ही जान पड़ती है। कोई वैज्ञानिक प्रमाण इसके लिये नहीं है। फिर भी यदि मान लें कि यह बात सच है तो क्या इस रत्तीभर गुणके लिये उसके पहाड़-जैसे दोषोंको भूल जाना चाहिये? क्या बादी पचने और दस्त साफ होनेके लिये कोई और अच्छा उपाय नहीं है? वास्तवमें यह कोई कारण नहीं, बल्कि तम्बाकू पीनेका एक बहानामात्र है। जब हम अपनी बुरी आदतोंको छोड़ना नहीं चाहते तब उनके लिये कोई-न-कोई इसी प्रकारके बहाने बना दिया करते हैं। जहाँतक मैं सोचता हूँ मुझे तो यही मालूम होता है कि तम्बाकू पीनेका कोई उचित कारण है ही नहीं और न उसका कोई खास उद्देश्य है। आरम्भ इसका केवल दूसरोंकी देखा-देखी और नकल करके किया जाता है, क्योंकि नकल करना मनुष्योंका बंदरोंकी तरह एक पैदाइशी स्वभाव है, और जब एक बार इसकी लत पड़ जाती है तब फिर जल्दी छूटती नहीं, बल्कि दिनोंदिन और तेजी पकड़ती जाती है। तुम्हें मालूम है कि बड़े-बड़े अंग्रेजी शिक्षाप्राप्त अमीरोंके यहाँ दो-दो सौ तीन-तीन सौ रुपये महीनेतककी सिगार या चिरुट फुँक जाया करती है और गरीबोंके यहाँ भी चाहे खानेको न जुटे, किंतु रुपये-आठ आने महीनेकी तम्बाकू, सिगरेट जरूर खर्च हो जाती

है । यही कारण है कि तम्बाकूके व्यापारसे बहुत-सी बड़ी-बड़ी कोठियाँ खड़ी हो गयी हैं और कितनी ही विलायती कंपनियाँ हमारे हाथ यह जहर बेचकर करोड़ोंकी रकम हम गरीबोंकी जेबसे हर साल निकाल ले जाया करती हैं । न जाने कितनी भूमि यहाँ तम्बाकूकी खेतीमें फँसी रहती है जो यदि अनाज पैदा करनेके काममें आती तो इस भूखे भारतवर्षका बड़ा भारी उपकार होता । अस्तु, तुम देखते हो तम्बाकूसे कलेजा फूँककर हम अपना स्वास्थ्य तो नष्ट करते ही हैं, साथमें अपनी गाढ़ी कमाईका बहुत-सा रुपया भी खोते हैं । इतना ही नहीं, इससे हम अपने जीवनकी बहुत कुछ नैतिक पवित्रताको भी नष्ट कर बैठते हैं ।

केशव—कैसे ?

पिता—यह मैं तुमको 'स्वच्छ वायु-सेवन' के सम्बन्धमें बातें करते हुए बतलाऊँगा कि मनुष्यका यह एक नैतिक कर्तव्य है कि हवाको व्यर्थ गंदी न करे । जो व्यक्ति लापरवाहीसे हवाको बेकार गंदी किया करता है, वह नैतिक दृष्टिसे समाजके प्रति बड़ा भारी अपराधी है । तम्बाकू पीनेवाला हवाको नित्य गंदी किया करता है और व्यर्थ गंदी किया करता है, क्योंकि इससे उसको सिवा हानिके कुछ लाभ नहीं होता और साथमें दूसरे लोगोंको भी उस गंदगीसे हानि उठानी पड़ती है । जब और जहाँ ये तम्बाकू पीनेवाले जरा फुरसतसे बैठे कि सिगरेट, बीड़ी या सिगारका धुआँ

उड़ा-उड़ाकर हवाको खराब करने लगते हैं। किसी कमरेके अंदर यदि दो-एक भी ऐसे आदमी आकर बैठ गये तो थोड़ी ही देरमें सारा कमरा दुर्गन्धसे भर उठता है। जो लोग तम्बाकू नहीं पीते, उनके लिये ऐसी जगह बैठे रहना एक भारी तपस्याका काम है। नाट्यशालाओं और सिनेमा-घरोंमें इस प्रकारका अनुभव नित्य ही हुआ करता है। चारों ओरसे बंद स्थान और सैकड़ोंकी भीड़में जिधर देखो उधर ही सिगरेट, बीड़ी और सिगार रावणकी चिताकी भाँति सुलग-सुलगकर धुआँ उड़ाती रहती हैं और अपनी दुर्गन्धसे हवाको भरती रहती हैं। रेलगाड़ियोंमें विशेषकर जाड़ेकी रातके समय तो यह दृश्य और भी बीभत्स हो उठता है। तमाम खिड़कियाँ बंद कर दी जाती हैं और फिर बिल्कुल बेफिक्रीके साथ सिगरेट-पर सिगरेट और बीड़ियों-पर-बीड़ियाँ फूँकी जाती हैं; जिससे सारा डब्बा दुर्गन्धपूर्ण धुएँसे भर उठता है और थूक तथा खखारसे सारी जमीन भी भर उठती है। बस, फिर मानो वहाँ साक्षात् नरक-कुण्डका दृश्य उपस्थित हो जाता है। किंतु तम्बाकूके लती लोगोंको इसकी परवा नहीं होती। उनका मस्तिष्क स्वार्थान्धतासे इतना कुण्ठित हो जाता है कि उनको यह मालूम ही नहीं पड़ता कि उनकी इस गंदी आदतसे किसी दूसरेको कष्ट होता है या नहीं।

केशव—सच है पिताजी! मेरे दर्जेमें भी दो-तीन ऐसे लड़के हैं, जो मास्टरोंसे छिपा-छिपाकर बीड़ी पिया करते हैं। वे जब मेरे पास बैठते हैं, तब उनके मुँहसे बदबू आती है।

पिता—बदबू तो आवेगी ही। तुम ऐसे लड़कोंका साथ हर्गिज मत करना। लड़कपनमें ऐसे लड़कोंके साथसे ही ये बुरी आदतें आ जाती हैं। इस प्रकारके लड़के स्वयं डूबते हैं और दूसरोंको भी ले डूबते हैं। याद रक्खो कि तम्बाकूका जहर बड़ोंकी अपेक्षा बालकोंके शरीरको कहीं ज्यादा हानि पहुँचाता है।

केशव—यह क्यों?

पिता—इसलिये कि बालकोंका शरीर पूरी तौरपर बना हुआ नहीं होता। उसकी हड्डियाँ मुलायम, मांसपेशियाँ सुकुमार और स्नायु तथा मस्तिष्क बिल्कुल कच्ची दशामें होते हैं। ऐसी अवस्थामें यदि तम्बाकूका जहर उसमें घर कर ले तो फिर इन सबकी बाढ़ मर जायगी। सब कच्चे ही रहकर मुर्झा जायँगे। हड्डियाँ नाटी और कमजोर रह जायँगी, मांसपेशियाँ सुस्त और शिथिल पड़ जायँगी तथा मस्तिष्क एवं स्नायुसंस्थान मुर्झाकर मुर्दा-सा बन जायगा। जिस प्रकार चाकूकी चोटोंको पीपल या बरगदके बड़े बड़े पेड़ तो आसानीसे बर्दास्त कर सकते हैं, किंतु एक पनपता हुआ पौधा उससे दो-एक क्षणोंके अंदर ही मर जायगा, वही हाल एक पूर्णवयस्क मनुष्य और छोटी उम्रके बालकके सम्बन्धमें तम्बाकूका भी समझो।

केशव—मैं समझ गया। आपकी बातोंको सदा ध्यानमें रक्खूँगा और ऐसी बुरी चीजके कभी पासतक न जाऊँगा।

व्यायाम और खेल-कूद

पिता–केशव ! क्या तुम जानते हो कि हर एक मशीन काम करनेसे घिसती है ?

केशव–हाँ, सो तो घिसेगी ही ।

पिता–लेकिन कुछ मशीनें ऐसी भी हैं जो काम करनेसे घिसतीं नहीं, बल्कि और सुन्दर, मजबूत तथा बढ़िया बन जाती हैं ।

केशव–वाह, यह तो एक विचित्र बात है ।

पिता–हाँ, दुनियाकी सबसे विचित्र बात !

केशव–भला, ये मशीनें हैं कहाँ ?

पिता–सबके पास हैं ।

केशव–अरे, क्या इतनी सस्ती हो गयीं ? पर आपके पास तो नहीं हैं ।

पिता–मेरे पास भी हैं और तुम्हारे पास भी ।

केशव–अयँ ! आप किन मशीनोंकी बात कह रहे हैं ?

पिता–मेरा मतलब अपनी देहकी मशीनोंसे है ।

केशव–ओह, अब समझा । परंतु क्या हमारी देहकी मशीनें काम करनेसे घिसतीं नहीं ?

पिता–घिसती हैं, परंतु ये मशीनें सजीव होती हैं ।

इसलिये अपनी क्षतिको अपने-आप पूरा कर लिया करती हैं। इतना ही नहीं, बल्कि इनमें क्षतिकी अपेक्षा पूर्तिकी चाल अधिक तेज हो जाती है। इसीलिये ये मशीनें काम करनेसे दिन-पर-दिन अधिक पोढ़ी, अच्छी और सुन्दर बनती जाती हैं।

केशव—क्या इसके लिये कोई प्रमाण भी मौजूद है?

पिता—हाँ, प्रमाण एक नहीं अनेक हैं और सब प्रत्यक्ष हैं। तुम उस जीवन लोहारको तो जानते होगे जिसकी दूकान लोहारी मुहल्लेमें है?

केशव—जी हाँ, खूब अच्छी तरह जानता हूँ। उसे तो मैं रोज ही आते-जाते देखा करता हूँ।

पिता—क्या तुमने उसकी भारी-भारी भुजाओंपर भी ध्यान दिया है? कैसी मोटी और मजबूत हैं?

केशव—हाँ, बहुत ही मजबूत हैं। तभी तो वह इतना भारी घन उठा-उठाकर घंटोंतक चलाता रहता है और फिर भी नहीं थकता।

पिता—हाँ, लेकिन ये भुजाएँ भी इतनी मोटी और मजबूत केवल इसीलिये हैं कि उन्हें रोज उस घनको घंटोंतक चलाना पड़ता है। यदि आज वह इस कामको छोड़ दे और पढ़ने-लिखनेका काम करने लगे, तो वे भुजाएँ भी वैसी न रह जायँगी! भला क्या तुमने कभी दफ्तरके बाबुओंकी भी भुजाएँ ऐसी मोटी और मजबूत देखी हैं

केशव—नहीं, उनकी भुजाएँ तो प्रायः कोमल और सुकुमार हुआ करती हैं।

पिता—हाँ, क्योंकि बाबुओंको लोहारकी तरह भारी-भारी घन नहीं चलाना पड़ता, केवल कलम चलानी पड़ती है। यदि आज जीवन लोहार किसी दफ्तरके बाबूसे अपना काम बदल ले तो थोड़े ही दिनोंके बाद उन दोनोंकी भुजाओंमें बहुत बड़ा परिवर्तन दिखायी देने लगेगा। अर्थात् जीवनकी भुजाएँ तो दिन-पर-दिन कोमल और कमजोर होती जायँगी और बाबूकी भुजाएँ अधिकाधिक मोटी तथा मजबूत होने लगेंगी। यही नियम शरीरके हर एक अङ्गके लिये लागू है। उदाहरणार्थ जिन लोगोंको नित्य दिनभर बाइसिकिलपर दौड़ना पड़ता है, उनकी टाँगें उसी प्रकार मजबूत हो जाती हैं, जैसे लोहारके हाथ। इसी तरह आँखें और कान भी नित्यके अभ्याससे बहुत अधिक तेज हो जाते हैं। जिन लोगोंको आँखोंसे बराबर काम लेना पड़ता है, उनकी आँखें बहुत-सी ऐसी चीजोंको देख सकती हैं, जिन्हें दूसरे लोग नहीं देख पाते और जिन लोगोंको अपने कानसे बराबर काम लेना पड़ता है उनके कान बहुत-से ऐसे शब्द सुन सकते हैं, जिन्हें दूसरे लोग नहीं सुन पाते। मैंने उस दिन एक किताबमें पढ़ा था कि जंगली आदमियोंकी आँखें कुछ मोटी और उभरी हुई हुआ करती हैं; क्योंकि उनकी मांसपेशियाँ शत्रु या शिकारकी खोजमें दूर-दूरतक देखने और जोर देकर

देखनेके कारण बड़ी हो जाती हैं। इसी प्रकार उनके कान भी जोर देकर सुननेके कारण बहुत तेज हो जाया करते हैं।

केशव—अच्छा यदि किसी अङ्गको बिल्कुल ही काममें न लाया जाय तो क्या हो ?

पिता—जो अङ्ग बिल्कुल ही काममें न लाया जायगा उसकी मांसपेशियाँ सिकुड़कर छोटी पड़ जायँगी और वह अङ्ग सूखकर मुर्दा हो जायगा। क्या तुमने प्रयागके माघमेलेमें उस साधूको नहीं देखा था, जो अपने हाथको सदा ऊपर ही उठाये रहता था ?

केशव—हाँ-हाँ देखा था ठीक है, अब खयाल आया। उसका एक हाथ ऊपरको उठा हुआ था और सूखकर बिल्कुल लकड़ी-सा बन गया था।

पिता—हाँ, वह लकड़ी-सा इसीलिये बन गया था कि उससे वर्षोंतक कोई काम नहीं लिया गया। यदि हम अपने शरीरको बिल्कुल ठीक हालतमें मजबूत और नीरोग रखना चाहते हैं तो यह जरूरी है कि अपने प्रत्येक अङ्गसे उचित ढंगपर काम लें। कुछ धंधे ऐसे हैं, जिनमें शरीरपर अपने आप काफी मेहनत पड़ जाती है, जैसे किसानीका काम, बागबानीका काम, मल्लाहीका काम, धोबीका काम इत्यादि। अतएव ऐसे धंधेवालोंको अलगसे मेहनत करनेकी जरूरत नहीं जान पड़ती। किंतु बहुत-से धंधे ऐसे हैं, जिनमें या तो सबेरेसे शामतक बैठे रहना पड़ता है अथवा केवल आँखों

और अंगुलियोंसे काम करना पड़ता है, जैसे दर्जीका काम, मोचीका काम, दूकानदारीका काम, चित्रकारीका काम इत्यादि। ऐसे धंधोंवालोंके लिये जरूरी है कि वे नित्य नियमपूर्वक खुली हवामें कुछ देर ऐसे परिश्रमके काम करें, जिनसे उनके हाथ, पैर और सम्पूर्ण शरीरकी मांसपेशियाँ संचालित हो सकें। तभी उनका शरीर ठीक हालतमें रह सकता है और तभी वे सब रोगोंसे बच सकते हैं। पढ़ने-लिखनेवालोंको तो केवल मस्तिष्कसे ही काम करना पड़ता है। अतएव ऐसे लोगोंको इस प्रकारके शारीरिक परिश्रमकी और भी ज्यादा जरूरत है। वास्तवमें हमारा शरीर सदैव परिवर्तन चाहता है। अस्तु, जिन लोगोंको दिनभर शारीरिक परिश्रम करना पड़ता हो, उन्हें आवश्यक है कि वे अपने शरीरको कुछ देर आराम दें और जिन्हें सवेरेसे संध्यातक केवल बैठना पड़ता हो अथवा मस्तिष्कसे काम करना पड़ता हो, उन्हें आवश्यक है कि वे कुछ देरतक शारीरिक परिश्रम करें। ऐसा शारीरिक परिश्रम जो नियमपूर्वक शरीरको ठीक रखने या उसे अधिक उन्नत और बलवान् बनानेके लिये किया जाता है, कसरत या व्यायाम कहलाता है। व्यायामकी महिमा बड़ी भारी है। हमारे प्राचीन आर्योंमें इसका बेहद प्रचार था। इसीके प्रतापसे बालि, अङ्गद, हनूमान्, बलराम तथा भीम-जैसे अलौकिक बलशाली पहलवान यहाँ हो चुके हैं, जिनकी कीर्ति-कहानी हमारे यहाँ आज भी घर-घर कही और सुनी जाती है। प्राचीन यूनान देशमें भी, जिसने समस्त

यूरोपको पहले-पहल अभ्युत्थानका मार्ग दिखलाया था, व्यायामकी लोकप्रियता बेहद बढ़ी हुई थी। व्यायामके ही द्वारा वहाँके निवासियोंने किसी समय अपने शारीरिक विकासको यहाँतक पूर्णतापर पहुँचा दिया था कि इटलीके शिल्पकार आजतक उनके शारीरिक सौन्दर्यको अपनी मूर्तियोंमें दिखानेकी चेष्टा किया करते हैं। यूनानी व्यायाम-शालाओंके नाम हजारों वर्ष बाद आज भी बड़े आदरके साथ लिये जाते हैं और ओलम्पिक खेलों (Olympic Games) की यादगार आज भी दुनियामें बड़े गौरवकी चीज बनी हुई है। आजकल भी तुमने सैण्डो और प्रोफेसर राममूर्तिका नाम तो सुना होगा?

केशव—जी हाँ। मैंने सुना है कि राममूर्ति दो-दो मोटरोंको एक साथ रोक लेते थे और लोहेकी मोटी-मोटी जंजीरोंको केवल अपने झटकेसे तोड़ डालते थे।

पिता—हाँ, यह सारी महिमा भी व्यायामकी ही है। कहाँतक कहें, इसकी महिमाको सम्पूर्ण रूपसे बतलानेके लिये बहुत-सा समय चाहिये। अतएव थोड़ेमें तुम इतना ही समझ लो कि हमारे शरीरका सम्पूर्ण उत्थान और पतन एक 'व्यायाम' शब्दके अंदर ही छिपा हुआ है। उचित व्यायामकी आवश्यकता हमारे शरीरकी उन्नतिके लिये उतनी ही अधिक है, जितनी कि उचित भोजनकी आवश्यकता। व्यायाम और भोजन—बस ये ही दो ऐसे पहिये हैं, जिनपर हमारे शरीरकी गाड़ी

उन्नतिके रास्तेपर आगे बढ़ सकती है। यदि इनमेंसे किसी एकका भी अभाव हो जाय तो गाड़ी लँगड़ी हो जायगी और नीचे गिर पड़ेगी। अतएव हमें इन दोनोंपर ही पूरा-पूरा ध्यान रखना आवश्यक है। दुनियामें आजकल जितने भी उन्नतिशील राष्ट्र हैं, सबोंमें इन दोनों बातोंपर अत्यधिक ध्यान दिया जाता है। जर्मनी हो या जापान, इंगलैंड हो या अमेरिका—सब जगह व्यायामकी महत्ता उतनी ही अधिक मानी जाती है, जितनी भोजनकी आवश्यकता; किंतु हमारे देशमें बात बिल्कुल उलटी दिखायी देती है। यहाँ तो जिन लोगोंको सवेरेसे शामतक कठिन शारीरिक परिश्रम करना पड़ता है, उन्हें पेटभर भोजन नहीं जुटता और जिन्हें दूध-मलाई और मालपूआ खानेको मिलता है, वे शारीरिक परिश्रमके पास नहीं फटकते। ऐसी अवस्थामें यदि हम अधिकतर रोगी और कमजोर बने रहें तो उसमें आश्चर्य ही क्या है? याद रक्खो कि व्यायामको छोड़कर और कोई भी ऐसा दूसरा साधन नहीं है, जिससे हमारा खून हमारे शरीरके हर एक भागमें अच्छी तरह बराबर चक्कर लगाता रहे। हमारे शरीरमें मीलों लंबी खूनकी ऐसी पतली-पतली नालियाँ बिछी हैं कि उनके सामने एक बाल भी इतना मोटा जान पड़ता है जितना एक बारीक सूतके सामने मोटा रस्सा। इन तमाम नालियोंमें खूनका बराबर दौड़ते रहना तभी सम्भव है जब कि हम कसरतद्वारा शरीरके हर-एक हिस्सेपर पूरा जोर डालें और उसे संचालित्त करें।

केशव—यदि यह खून सब जगह ठीक-ठीक न दौड़े तो क्या होगा?

पिता—देखो, खूनके दौड़नेसे हमारे शरीरमें दो प्रकारके काम होते हैं;प्रथम तो शरीरके हर एक हिस्सेको पूरा-पूरा भोजन मिल जाता है, जिससे हमारी तमाम क्षति पूरी हो जाती है। इस सम्बन्धमें पहले बतला चुका हूँ कि अन्य मशीनोंके समान हमारे शरीरकी मशीनें भी काम करनेसे बराबर घिसती रहती हैं। हम स्वयं चाहे कोई काम न भी करें, परंतु हमारे भीतरकी मशीनोंका काम नहीं रुक सकता। वे तो अपना काम हर घड़ी और हर क्षण, जबतक हम जीते हैं, करती ही जायँगी। उदाहरणार्थ हमारे हृदय, फेफड़े, पाकाशय, जिगर, गुर्दे आदि अपना काम एक पलभरके लिये भी नहीं छोड़ सकते, चाहे हम सोते रहें या जागते, काम करते रहें या बैठे। अतएव इनका घिसना और छीजना भी दिन-रात बराबर जारी रहता है। लेकिन यह सारी क्षति हमारे भोजन किये हुए पदार्थोंके रससे ये पूरी कर लिया करते हैं और यह रस इनके पासतक हमारे खूनके ही द्वारा पहुँच सकता है। अस्तु, जबतक हमारा खून इनकी बारीक-से-बारीक रगोंमें स्वतन्त्रतापूर्वक न दौड़े, तबतक इन्हें पूरी-पूरी खुराक नहीं मिल सकती और न ये अपनी क्षतिको ही किसी तरह पूरा कर सकते हैं। खूनके दौड़नेसे जो दूसरा काम हमारे शरीरमें हुआ करता है, वह है शरीरकी भीतरी

सफाई। इस सम्बन्धमें हम 'स्वच्छ वायु-सेवन' की चर्चा करेंगे तब तुम्हें बतलायेंगे कि किस प्रकार हमारे भीतरकी गंदगी खूनके साथ शरीरके हर एक भागसे बहकर फेफड़ोंमें आती है और फिर किस प्रकार कार्बोनिक एसिड गैसके रूपमें वह श्वासके द्वारा बाहर निकाल दी जाती है। पश्चात् हमारा खून फेफड़ोंसे हवाकी आक्सीजनको लेकर शरीरके प्रत्येक भागमें लौट जाता है और फिर उसे पोषित करता है। अस्तु, यदि यह खून शरीरके हर एक भागमें और उसकी पतली-से-पतली नालियोंमें स्वतन्त्रतापूर्वक न दौड़े तो न तो हमारे भीतरकी भलीभाँति सफाई होगी और न उसे पूरी-पूरी खूराक या पोषण ही मिलेगा। परिणाम यह होगा कि हमारा शरीर दिन-पर-दिन दुर्बल, रोगी और क्षीण होता जायगा।

केशव—अच्छा तो व्यायाम किया कैसे जाता है?

पिता—व्यायाम करनेकी सैकड़ों विधियाँ हैं। इनमेंसे दंड और बैठक करना तथा मुगदर भाँजना—हमारी देशी और बहुत पुरानी विधि है। आजकलकी नई विधियोंमें डम्बल और जिम्नास्टिककी कसरतें भी बहुत अच्छी हैं। इनसे शरीरका विकास बड़े सुन्दर रूपमें होता है। इनके अतिरिक्त दौड़ना, कूदना, उछलना, पानीमें तैरना, नाव खेना और घुड़सवारीका काम भी व्यायामके ही अन्तर्गत है। तरह-तरहके खेल-कूद भी व्यायाममें ही शामिल हैं,

जैसे टेनिस, पोलो, हाकी, फुटबाल, वॉलीबाल, क्रिकेट इत्यादि। इनमेंसे कुछ खेलोंका प्रबन्ध प्रायः हर एक अंग्रेजी स्कूल और कालेजमें रहा करता है, किंतु ये सब खेल पैसेवालोंके लिये हैं। हमारा हिंदुस्तानी कबड्डीका खेल एक ऐसा खेल है, जिसमें कसरत और मनबहलाव तो उतना ही होता है जितना उपर्युक्त खेलोंमें, किंतु पैसा एक भी नहीं खर्च होता। अतएव इससे गरीब और अमीर सब लाभ उठा सकते हैं। योगासनकी क्रियाएँ भी हमारी नसों, रगों और मांसपेशियोंको खींचने और ताननेमें बड़ा काम करती हैं। साथ ही इनसे साँस भी जल्दी नहीं फूलती। अलग-अलग प्रकारके आसन अलग-अलग अङ्गोंके लिये उपयोगी बतलाये जाते हैं। इनमेंसे 'शीर्षासन' की प्रशंसा सबसे ज्यादा है। किंतु कुछ लोगोंको यह ठीक नहीं पड़ता। मैंने भी जब-जब इसे आरम्भ किया तब-तब सिरमें कठिन पीड़ा पैदा हो गयी। इसलिये मुझे तो 'सर्वाङ्गासन' और 'मयूरासन' ही ज्यादा अच्छे जँचे। इनसे पेट, पीठ, छाती, टाँगों और अँतड़ियोंकी कसरत बहुत अच्छी हो जाती है। किंतु प्रत्येक व्यक्तिको अपनी-अपनी रुचि और सामर्थ्यके अनुसार अपने ढंगकी कसरत स्वयं पसंद कर लेनी चाहिये। उद्देश्य सबका एक ही है, अर्थात् शरीरका स्वास्थ्य। हाँ, कसरत चुननेमें इस बातका ध्यान जरूर रहे कि शरीरकी सम्पूर्ण मांसपेशियोंपर या उसकी अधिक-से-अधिक मांसपेशियोंपर

जहाँतक सम्भव हो जोर डाला जा सके और यह जोर कभी आवश्यकतासे अधिक न हो। वैसे तो हमारे प्रत्येक अङ्गका सम्बन्ध दूसरे अङ्गोंके साथ इतना घनिष्ठ है कि किसी भी एक अङ्गके संचालनसे दूसरे अङ्गोंपर प्रभाव पड़ना जरूरी है। उदाहरणके लिये लोहारको केवल अपनी भुजाओंसे काम लेना पड़ता है, किंतु फिर भी उसके हृदय और फेफड़ोंका काम भी उससे बढ़ ही जाता है और रक्तके संचालनमें भी तेजी आ जाती है, जिससे शरीरकी सम्पूर्ण क्रिया तेज हो जाती है। लेकिन भुजाओंकी मांसपेशियोंपर विशेषरूपसे जोर पड़नेके कारण केवल उसी भागका विकास अधिक होता है; शेष दूसरे भाग उतना विकास नहीं पाते। अस्तु, आदर्श व्यायाम वह है, जिससे शरीरके प्रत्येक भागपर समानरूपसे और उचित मात्रामें जोर पड़े और सम्पूर्ण शरीरका समानरूपसे विकास हो। इस विचारसे खुले मैदानमें प्रातःकाल तेजीके साथ पैदल चलना सबसे अच्छी कसरत कही जा सकती है। इससे हाथ, पैर, छाती, पेट और अँतड़ियोंका एक साथ और समानरूपसे व्यायाम हो जाता है। साथ ही मैदानकी स्वच्छ वायुके सेवन तथा प्रकृतिके चित्र-विचित्र दृश्योंको देखनेसे मन भी अत्यन्त प्रफुल्लित और पवित्र हो जाता है। तुम्हारे लिये हम एक और कसरत बतलाते हैं, जिसे तुम घरपर आसानीसे कर सकते हो।

केशव—वह कौन-सी कसरत है?

पिता—वह है एक जिम्नास्टिककी कसरत किंतु घरपर

आसानीसे की जा सकती है और बड़ी अच्छी भी है। एक मामूली लोहेका दो हाथ लंबा पाइप,अथवा लकड़ीका चिकना डंडा, लाठी या बाँस लेकर और उसके दोनों सिरोंको तार या रस्सीसे बाँधकर उसे छतसे आड़ा टाँग लो। और बस फिर इसी डंडेको रोज दोनों हाथोंसे पकड़कर लटको और जोर-जोरसे झूलो। इस प्रकार दो-चार मिनट झूल लेनेके बाद अपनी टाँगोंको और सारे शरीरको कड़ा करके धीरे-धीरे ऊपरको उठाओ और डंडेको अपने मुँहसे छुआओ। पश्चात् उसी प्रकार धीरे-धीरे फिर नीचेको आ जाओ। इस प्रकार तीन-चार बार करो। तत्पश्चात् उसी तरह लटकते हुए शरीरको कड़ा करके टाँगोंको जितना ऊपर ले जा सकते हो धीरे-धीरे ले जाओ और फिर नीचे ले आओ। इसे भी रोज तीन-चार बार करो। इस प्रकार केवल पाँच-सात मिनटकी कसरतसे सारे शरीरका व्यायाम हो जायगा और फिर किसी दूसरे प्रकारके व्यायाम-की जरूरत न रहेगी।

केशव—लेकिन क्या इतनी ही कसरतसे हम राममूर्तिकी तरह बलवान् बन सकते हैं?

पिता—नहीं, और न हमें उसकी आवश्यकता ही है। लोहेकी जंजीरें तोड़ना, मोटर गाड़ियाँ रोकना अथवा पहलवानी करना पेशेवर लोगोंके काम हैं। ऐसे लोग अपना सारा ध्यान केवल शारीरिक बलको बढ़ानेमें ही लगाया करते हैं और फिर उनसे दूसरा काम नहीं हो सकता। मस्तिष्कका काम तो ऐसे लोगोंसे बहुत ही कम हो सकता है और

ये दीर्घायु भी अधिकतर नहीं देखे जाते। हम और तुम जैसे व्यक्तियोंका उद्‌देश्य शारीरिक बलको उतना बढ़ाना नहीं है, जितना उसे स्वस्थ, नीरोग और जीवनमें अधिक से-अधिक काम लायक बनाये रखना है। अतएव हमें केवल उतने ही व्यायामकी जरूरत है, जितनेसे हमारा शरीर सदा स्वस्थ और फुर्तीला रह सके और हमारी मानसिक शक्तियोंके विकासमें सहायता मिले।

केशव—अच्छा, हमें कसरत करनी किस समय चाहिये?

पिता—कसरतका सबसे अच्छा समय प्रातःकाल है। संध्याको भी वह की जा सकती है, किंतु संध्यामें मनुष्य दिनभरकी मेहनतके बाद थका हुआ-सा रहता है। अतएव ऐसे समयमें कठिन व्यायामके लिये तबीयत नहीं होती। लेकिन सबेरे हो या संध्या, कसरत कभी भोजनके बाद तत्काल ही नहीं करने लगना चाहिये, नहीं तो, लाभके बजाय हानि ही उठानी पड़ेगी। भोजनके कम-से-कम तीन-चार घंटे बाद ही कसरत की जा सकती है। इसके अतिरिक्त कसरत सदैव स्वच्छ और खुली हुई हवामें करनी चाहिये। बंद कोठरीमें अथवा गर्द या धूएँसे भरी हुई हवामें कसरत करना सदैव हानिकारी सिद्ध होती है।

केशव—समझ गया। अब कल सबेरेसे ही कसरत शुरू कर दूँगा।

फोटोका दैवी केमेरा

'नेत्र'

केशव—पिताजी ! मामाजी बंबईसे फोटो खींचनेका एक बहुत बढ़िया केमेरा लाये हैं । आज उन्होंने उसीसे मेरा चित्र खींचा है ।

पिता—परंतु क्या तुम्हें मालूम नहीं कि उससे भी बढ़िया दो-दो केमरे स्वयं तुम्हारे पास मौजूद हैं ? ये केमेरे तो ऐसे बढ़िया हैं कि बंबई क्या, दुनियाके किसी भी देशमें किसी दामपर नहीं मिल सकते ।

केशव—मेरे पास ? मेरे पास ऐसे कौन-से केमेरे हैं ?

पिता—तुम्हारे ये दोनों नेत्र । ये फोटोके केमेरे ही तो हैं । बल्कि यों कहो कि फोटोके केमेरे इन्हींकी नकलपर बनाये गये हैं । असल केमेरा तो नेत्र ही है, जो ईश्वरका बनाया हुआ है और जिसे हम अपना दैवी केमेरा कह सकते हैं ।

केशव—क्या नेत्रोंकी बनावट फोटोके केमेरेकी तरह होती है ?

पिता—हाँ, बिल्कुल उसी तरहकी । केवल बाजारू केमेरा साधारण तौरपर चौकोर होता है और हमारी आँखें अण्डाकार हैं । किंतु यह अन्तर भी केवल बाहरी रूपमें है । भीतरके

यन्त्र और पुर्जे तो दोनोंमें एकसे ही हुआ करते हैं।

केशव—कैसे ?

पिता—देखो, केमेरेके सामनेवाले भागमें तुमने देखा होगा कि एक काँच लगा रहता है, जिसे 'लेन्स' (Lens) या 'ताल' कहते हैं। बाहरी चीजोंकी छाया इसी काँचसे होकर केमेरेके अंदर एक स्थानपर गिरती है और वहाँ ही उसका चित्र खिंच जाता है। प्रकाशके कम या ज्यादा होनेसे यह चित्र स्पष्ट या अस्पष्ट हो सकता है। इसीलिये प्रकाशको केवल आवश्यकतानुसार उचित मात्रामें ही भीतर पहुँचने देनेके लिये केमेरेके सामने एक छेद भी बना रहता है, जो इच्छानुसार छोटा या बड़ा किया जा सकता है। इसी छेदसे होकर बाहरी चीजोंकी जो छाया केमेरेके भीतर पहुँचती है, वह काँचके एक मसाला लगे हुए प्लेट या फिल्मपर गिरती है और बस वहीं वह उपट आती है। केमेरेका कुल भीतरी भाग काले रंगसे रँगा रहता है। यही सब बातें हमारी आँखोंमें भी पायी जाती हैं। इनमें भी सामनेकी ओर एक 'लेन्स' या ताल लगा रहता है, जो भीतरकी ओर एक काले पर्देसे ढँका रहता है। इसे हम आँखकी पुतली कहते हैं। यूरोप-निवासियोंकी आँखोंमें यह पर्दा काला न होकर नीला या फिरोजी रंगका हुआ करता है। इसी पर्देके बीचोबीच एक नन्हा-सा गोल-गोल बिन्दु भी दीखता है, जिसे हम आँखका 'तिल' या 'तारा' कहते

हैं और जो वास्तवमें एक छेद है। यह छेद काले रंगका दिखायी देता है, क्योंकि आँखका अन्तःपटल बिल्कुल काला है। जिस प्रकार एक घरके भीतरका गहरा अन्धकार एक छोटेसे छेदद्वारा काले रंगका दीखता है, उसी प्रकार हमारी आँखका यह काला तिल भी भीतरके काले रंगको प्रकट करता है। तेज़ प्रकाशमें यह तिल अर्थात् छेद पुतलीके पर्देसहित सिकुड़कर छोटा-सा हो जाता है, परंतु अन्धकारमें यह फैल जाता है। इसी छेदके द्वारा लेन्सको पार करके बाहरी चीजोंका जो प्रतिबिम्ब अर्थात् चित्र आँखके अंदर पहुँचता है वह वहाँके पिछले भागमें एक दूसरे पर्दे (Retina) पर गिरता है, जिसे हम फोटोका प्लेट या फिल्म कह सकते हैं। इस पर्देका सम्बन्ध स्नायुओंद्वारा मस्तिष्कसे रहा करता है, जिससे पर्देपर चित्र गिरते ही तुरंत उसकी सूचना मस्तिष्कको मिल जाती है और वह जान सकता है कि आँखोंके सामने क्या वस्तु है। फोटोका केमेरा जिस प्रकार लकड़ी, चमड़े और कपड़ेसे मढ़े हुए ढाँचेमें सुरक्षित रहता है, उसी प्रकार हमारे ये नेत्र भी हड्डियोंसे बने हुए गड्ढोंमें सुरक्षित हैं और ऊपरसे पलकें भी उनकी रक्षा किया करती हैं। कुछ केमेरोंमें तुमने देखा होगा कि उनके मुँहको चित्र लेते समय ठीक सीधानपर रखनेके लिये कुछ ऊपर-नीचे हटानेका भी प्रबन्ध रहता है। उसी प्रकार हमारे नेत्रोंकी पुतलियाँ भी इच्छानुसार ऊपर-नीचे और इधर-उधर फिरायी जा सकती हैं, जिससे हम बिना सिर घुमाये इधर-उधरकी चीजोंको देख सकते हैं। प्रत्येक नेत्रमें इसके लिये

छः-छः मांसपेशियाँ लगी रहती हैं। इस प्रकार तुम देखते हो कि हमारे नेत्र फोटोके केमेरेसे हर एक बातमें मिलते-जुलते हैं। अपूर्वता केवल इतनी ही है कि आदमीके बनाये हुए बाजारू केमेरेमें एक प्लेटपर केवल एक ही चित्र खिंच सकता है; और दूसरा चित्र लेनेके लिये उसमें दूसरा प्लेट भरनेकी जरूरत होती है, किंतु हमारे नेत्ररूपी इस दैवी केमेरेमें एक प्लेट जीवनपर्यन्त सब प्रकारकी तस्वीरें खींचनेके लिये काफी है। ईश्वर और मनुष्यके काममें यही अन्तर है।

केशव—अच्छा, ये आँखें दो क्यों दी गयी हैं ? क्या एक ही आँखसे काम नहीं चल सकता था ?

पिता—चल सकता था, परंतु उतना अच्छा नहीं जितना दो आँखोंसे। हमारे ज्ञानका अधिकतर भाग केवल देखने और सुननेकी शक्तियोंपर निर्भर रहता है। इसीलिये हमें आँख और कान दो-दो दिये गये हैं। ये आँखें सिरके सामनेवाले भागमें रक्खी गयी हैं, क्योंकि इससे हमें देखनेमें सुविधा मिलती है। यदि ये शरीरके किसी अन्य स्थानमें होतीं तो हमें उतनी सुविधा न होती।

केशव—नेत्रोंके ऊपर-नीचे पलकोंपर बरौनींके बाल क्यों पैदा किये गये हैं ? क्या इनसे भी कुछ प्रयोजन है ?

पिता—हाँ, इनसे भी आँखोंकी रक्षा होती है, और बाहरसे धूल, गर्द इत्यादि आँखोंके अंदर नहीं जाने पाती। साथ ही नेत्रोंको साफ और निर्मल रखनेके लिये ऊपरकी

पलकोंके अंदर पानी निकालनेका एक-एक यन्त्र भी रहता है, जिसे 'अश्रुग्रन्थि' (Tear-glanb) कहते हैं। इससे थोड़ा-थोड़ा जल निकलकर नेत्रोंको सरस और साफ रखता है। इस यन्त्रसे मिली हुई एक छोटी-सी नली नाकके अंदर लगी है। धुआँ लगनेसे अथवा रोते समय जब अश्रुग्रन्थिसे आँसू बहुत अधिक मात्रामें बन-बनकर बहने लगता है, तब उसका कुछ पानी इस नलीद्वारा नाकमें भी आकर टपकने लगता है।

केशव—मेरे दरजेके कई लड़के आँखोंपर चश्मा लगाते हैं और कहते हैं कि बिना चश्मा उन्हें दूरकी चीजें साफ तौरसे दिखायी नहीं देतीं। इसका क्या कारण है?

पिता—यह दृष्टिदोष नेत्रोंके सामनेवाले पारदर्शक भाग (Cornea) में कुछ विरूपता उत्पन्न हो जानेके कारण आ जाया करता है। जिन लोगोंको नजदीककी चीजोंपर नित्य बहुत समयतक दृष्टि गड़ाये रखना पड़ता है, उनके नेत्रका यह पारदर्शक भाग बीचमें कुछ मोटा और किनारेकी ओर कुछ पतला पड़ जाता है, जिससे दूरकी वस्तुओंसे आनेवाली प्रकाशकी किरणें यहाँ आकर बिखर जाती हैं और अंदरके चित्रपट (Retina) पर ठीक ढंगसे अङ्कित (focussed) नहीं हो सकतीं। निदान, उन वस्तुओंका चित्र भी नेत्रोंके भीतर स्पष्ट रूपसे नहीं खिंच सकता और वे धुँधली दिखायी देती हैं। किंतु जब चश्मेका एक ऐसा कृत्रिम ताल उनके सामने लगा दिया जाता है जिसके

बीचका भाग तो पतला और किनारेका भाग मोटा हो, तब सारा दोष मिट जाता है और उन वस्तुओंका चित्र नेत्रोंके भीतर फिरसे अपने स्वाभाविक ढंगपर प्रकट होने लगता है। आँखोंमें इस प्रकारका दोष अधिकतर पढ़े-लिखे लोगोंमें ही दिखायी देता है; क्योंकि उन्हें नित्य घंटोंतक अपनी दृष्टि पुस्तकके बारीक अक्षरोंमें गड़ाये रखना पड़ता है। परंतु कभी-कभी यह दोष पैदायशी भी हुआ करता है और छोटे-छोटे बालकोंतकमें देखा जाता है। इसके विपरीत एक दूसरे प्रकारका दृष्टिदोष भी होता है जिसमें आदमीको दूरकी चीजें तो स्पष्ट दिखायी देती हैं, किंतु पासकी चीजें धुँधली जान पड़ती हैं। ऐसे लोग दूरपर लगे हुए साइनबोर्डके अक्षरोंको तो आसानीसे पढ़ लेते हैं, किंतु हाथमें ली हुई पुस्तकके अक्षरोंको बिना चश्माके नहीं बाँच सकते।

केशव—यह दोष कैसे हो जाता है?

पिता—यह दोष भी नेत्रोंके सामनेवाले पारदर्शक भाग (Cornea) की विरूपतासे ही उत्पन्न हो जाता है, किंतु इसमें विरूपता दूसरे प्रकारकी होती है अर्थात् इसमें पारदर्शक भागका बीचवाला अंश मोटा न होकर पतला पड़ जाता है और मोटाई किनारेके भागोंपर चढ़ जाती है। अतएव इसके लिये एक ऐसे ऐनककी जरूरत होती है, जिसके ताल बीचमें तो मोटे हों और किनारेकी ओर पतले। जिन्हें पढ़ने-लिखने या सीने-पिरोनेके लिये ऐनक लगाना पड़ता है, उनका ऐनक बस इसी प्रकारका होता है। किंतु दूरका

दृष्टिदोष हो या नजदीकका—सबका मूल कारण प्रायः स्वास्थ्यके नियमोंकी अवहेलना और नेत्रोंका अनुचित उपयोग ही हुआ करता है। यदि आरम्भसे ही स्वास्थ्यके नियमोंका पालन करते हुए नेत्रोंकी रक्षाका पूरा-पूरा ध्यान रक्खा जाय तो चश्मा लगानेका अवसर बहुत ही कम आने पावे।

केशव—अच्छा तो नेत्रोंकी रक्षाके लिये करना क्या चाहिये ?

पिता—देखो, विद्यार्थियोंमें जो आँखोंकी कमजोरी अधिकतर देखी जाती है, वह उनके पढ़ने-लिखनेके अनुचित ढंगसे ही उत्पन्न हो जाया करती है। अतएव सबसे पहले उन्हें अपने पढ़ने-लिखनेका ढंग ही सुधारना चाहिये।

केशव—कैसे ?

पिता—देखो, बहुत-से लड़कोंकी आदत होती है कि पुस्तकको आँखोंके बिल्कुल पास ले जाकर पढ़ते हैं। यह आदत अच्छी नहीं। इससे आँखें बहुत जल्द खराब हो जाती हैं। पढ़नेमें किताबको न तो बहुत पास रखना चाहिये और न बहुत दूर। करीब एक हाथकी दूरीपर रखकर पढ़ना चाहिये। किताबको धूपमें भी रखकर पढ़ना ठीक नहीं है। इससे आँखें कमजोर हो जाती हैं। सदैव छायामें ही बैठकर पढ़ना चाहिये और पढ़ते समय बैठना इस तरह चाहिये कि प्रकाश सामनेकी तरफसे न आवे, बल्कि बायीं तरफसे आता रहे। संध्या-समय या धीमी रोशनीमें भी कभी न पढ़ना

चाहिये, क्योंकि इससे भी आँखोंपर बड़ा जोर पड़ता है। कुछ लड़के सदैव हिल-हिलकर पढ़ा करते हैं और कुछको पेटके बल लेटकर पढ़नेकी आदत होती है। ये दोनों आदतें भी बहुत बुरी हैं। इनसे न केवल आँखें ही खराब होती हैं, बल्कि फेफड़े और पेट भी दबकर कमजोर पड़ जाते हैं। पढ़ने-लिखनेका काम जहाँतक हो सके, किसी मेज या डेस्क-पर रखकर करना उत्तम है। डेस्ककी ऊँचाई इतनी हो कि पढ़ते समय शरीरको झुकना न पड़े। डेस्क नीचा होनेसे लड़कोंको झुककर बैठनेकी आदत पड़ जाती है, जिससे रीढ़ टेढ़ी पड़ जाती है। यदि मेज या डेस्क न मिले तो किताब रखनेके लिये किसी संदूकचीको ही काममें लाया जा सकता है। इसके अतिरिक्त जब कभी बहुत देरतक लगातार लिखने-पढ़नेका काम करना पड़े तो थोड़ी-थोड़ी देरमें नेत्रोंको किताब या काग़जपरसे हटाकर एक या दो मिनटतक किसी दूरकी चीजको देखने लग जाय। इससे आँखोंमें जल्दी दृष्टिदोष नहीं पैदा होने पाता और न वे उतनी जल्दी थकती ही हैं। यह सावधानी तो पढ़ने-लिखनेके सम्बन्धमें हुई। अब कुछ दो-एक बातें और हैं, जिन्हें सीने-पिरोनेवाली लड़कियों एवं सिनेमा-थियेटर देखनेवाले शौकीनोंको ध्यानमें रखना चाहिये।

केशव—वे क्या हैं?

पिता—बहुधा लड़कियाँ सीने-पिरोनेके समय नेत्रोंपर बहुत अनुचित जोर डाला करती हैं, जिससे उनकी आँखें

और सिर दर्द करने लगते हैं और धीरे-धीरे नेत्रोंकी शक्ति भी घट जाती है। सीते समय इस बातका सदा ध्यान रखना चाहिये कि गर्दन और छाती बहुत झुकी हुई न हो और दृष्टि सदा एक ही स्थानपर न पड़ी रहे, बल्कि सुईके साथ-साथ ऊपर और नीचेको बराबर फिरती रहे। इससे नेत्रोंपर जोर बहुत कम पड़ेगा और आँखें जल्दी खराब न होने पायेंगी।

केशव—सिनेमा देखनेमें किस बातका ध्यान रखना चाहिये?

पिता—सिनेमासे भी बहुत-सी आँखें खराब हो जाया करती हैं, किंतु इसका मुख्य कारण सिनेमा देखना नहीं, बल्कि सिनेमा देखनेका अनुचित ढंग है। साधारण लोग प्रायः सिनेमाको आँख फैलाये हुए घंटोंतक एकटक देखा करते हैं और बस, इसीसे उनकी आँखें खराब हो जाती हैं। सिनेमा या नाटक देखनेका ठीक ढंग यह है कि कुर्सीपर आरामसे किंतु सीधे होकर बैठो, सिर पीछेको झुका हो, ठोढ़ी ऊपरको उठी रहे और आँखोंकी पलकें कुछ-कुछ नीचेको गिरी हुई हों तथा अपनी स्वाभाविक रीतिपर बराबर भँजती भी रहें। बहुत-से लोग पलक भाँजनेका ठीक-ठीक ढंग नहीं जानते। उनकी पलकें कभी झटकेके साथ और कभी अनियमित रूपसे उठती तथा गिरती रहती हैं। वास्तवमें पलक भाँजनेका मुख्य उद्देश्य नेत्रोंकी थकावट मिटाना और उन्हें क्षणिक आराम देना ही हुआ करता है। अतएव

इसकी स्वाभाविक विधि यह है कि ऊपरकी पलक धीरेसे केवल इतनी मुँदे कि उससे आँखकी पुतलीमात्र ढँक जाय और तत्काल ही वह फिर खुल जाय । इस प्रकार प्रति मिनट दस बारके हिसाबसे पलकोंको सदैव खुलते और मुँदते रहना चाहिये । चाहे हम पढ़ते-लिखते हों या किसी चीजको देखते हों, हमारी पलकोंका यह काम हर समय और हर हालतमें जारी ही रहना चाहिये । इसे रोकना किसी समय भी उचित नहीं । बहुधा देखा जाता है कि सिनेमा या थियेटर देखते समय बहुत-से भावुक लोग अपनी पलकोंका भाजना एकबारगी बंद कर दिया करते हैं । इससे आँखोंपर बड़ा जोर पड़ता है और उनकी देखनेकी शक्ति घट जाती है । अतएव इस विषयमें विशेषरूपसे सावधान रहनेकी जरूरत है । साथ ही सिनेमा या नाटक देखते समय पलकोंको बहुत ऊपर उठाना भी अच्छा नहीं है । केवल ठोढ़ीको ही ऊपर उठाये रहना चाहिये । इससे आँखोंपर बहुत कम जोर पड़ेगा और ये जल्दी खराब नहीं होने पायेंगी । आँखके एक अनुभवी डाक्टरने 'सब प्रकारके दृष्टिदोषोंको दूर करनेके लिये कुछ विशेष प्रकारके अभ्यास बतलाये हैं, जिन्हें यद्यपि मैं तो नहीं आजमा सका, किंतु एक अनुभवी विशेषज्ञकी कही हुई बात होनेके कारण वह हर एक मनुष्यके लिये आजमानेयोग्य समझा जा सकता है ।

केशव—किस प्रकारके अभ्यास हैं वे ?

पिता—पहला है सूर्यताप-सेवन । डाक्टरका कहना है

कि सूर्य हमारी आँखोंकी तमाम खराबियोंको ठीक करनेकी अद्भुत क्षमता रखता है। अतएव सूर्यके सामने मुँह करके आरामसे पलथी मारकर बैठ जाओ और आँखोंको मूँदकर अपने शरीरको दायें और बायें धीरे-धीरे बराबर हिलाते रहो। इस प्रकारकी क्रिया नित्य संध्या और सबेरे दस मिनटसे लेकर तीस मिनटतक की जा सकती है।

केशव—और दूसरी क्रिया कौन-सी है?

पिता—दूसरी क्रिया एक नेत्रपरीक्षक चार्ट (Snellen eye-testing chart) को नियमपूर्वक पढ़ना है। इस चार्टमें छोटे-से-छोटे और बड़े-से-बड़े अक्षर क्रमपूर्वक छपे रहते हैं। लड़कोंको चाहिये कि यह चार्ट दीवारपर टाँग लें और फिर आठ या दस फीटकी दूरीपर बैठकर उसके छोटे-से-छोटे अक्षरोंको, जो आसानीसे पढ़े जा सकते हों, नित्य पढ़नेकी चेष्टा करें। इस प्रकारकी चेष्टासे, डाक्टरका कहना है कि, कितने ही विद्यार्थियोंकी आँखें स्थायीरूपसे सुधारी जा चुकी हैं। अतएव यह विधि भी आजमानेयोग्य है। हमारे वैद्यक ग्रन्थोंमें नेत्रोंकी ज्योति बढ़ानेके लिये त्रिफलाका सेवन, त्रिफलाके पानीसे आँखें धोना, शहद, गौका घी तथा मक्खन आदिकी बड़ी प्रशंसा गायी गयी है। लेकिन याद रहे कि जबतक स्वास्थ्यरक्षक नियमोंका पूर्णरूपसे पालन न किया जायगा और हमारी ऊपर बतलायी हुई नेत्ररक्षासम्बन्धी तमाम बातोंपर पूरा-पूरा ध्यान न रक्खा जायगा, तबतक

कोई भी चिकित्साविधि कदापि कारगर नहीं हो सकती। हमारे नेत्र इस जीवनके अमूल्य रत्न हैं। अतएव इनके विषयमें किसी प्रकारकी भी उपेक्षा या लापरवाही करना भयंकर भूल है। जिस समय किसीको अपने नेत्रोंमें किसी प्रकारकी भी शिकायत जान पड़े, तो उसे तुरंत किसी अच्छे चिकित्सकको दिखाकर उसकी राय लेनी चाहिये और उसीकी सलाहसे काम करना चाहिये। आँखोंमें बहुत-से संक्रामक रोग भी हुआ करते हैं। अतएव उनकी छूतसे आँखोंको सदा बचाये रखना चाहिये। बहुधा देखा जाता है कि घरमें यदि एक बच्चेकी आँख उठी हो तो दूसरे बच्चोंकी भी आँखें उठ आया करती हैं। अतएव इस प्रकारकी छूतसे बचना बहुत जरूरी है। जिस बर्तनसे और जिस तौलिया या रुमालसे ऐसे बच्चोंका आँख-मुँह धोया और पोंछा जाता है, उसे दूसरोंके व्यवहारमें हर्गिज नहीं लाना चाहिये, नहीं तो, उसकी छूत दूसरोंको भी लग जायगी। सब बातोंको विस्तारपूर्वक समझानेके लिये यहाँ समय और स्थान नहीं है। संक्षेपमें केवल इतना ही समझ लो कि सब प्रकारकी शुद्धता और नेत्रोंका उचित उपयोग ही नेत्ररक्षाका सर्वश्रेष्ठ साधन है और इन्हींकी उपेक्षा भाँति-भाँतिके नेत्ररोगोंका आह्वान है।

केशव—मैं समझ गया हूँ और आपकी बतायी हुई बातों-पर सदा ध्यान रखूँगा।

पाचन और परिपुष्टि

केशव–पिताजी ! मुन्नी बहनके पेटमें दर्द है और बार-बार दस्त लगते हैं। माताजी कहती हैं कि उसे अपच हो गया है।

पिता–खाने-पीनेमें लापरवाही की होगी, इसीसे हो गया होगा। आज कुछ न खायेगी तो ठीक हो जायगा।

केशव–किंतु यह अपच है क्या चीज ?

पिता–बात यह है कि जब कभी हम केवल स्वादके लोभमें पड़कर कुछ ऐसी चीजें खा लिया करते हैं, जिनकी उस समय हमें कोई आवश्यकता नहीं रहती या जो जल्दी

पच नहीं सकतीं, अथवा जब कभी हम आवश्यकतासे अधिक भोजन कर लेते हैं या भोजनको बिना अच्छी तरह चबाये ही जल्दी-जल्दी निगल जाया करते हैं, तब हमारे अंदर भोजन पचानेकी जो मशीनें हैं, वे उस भोजनको पचानेमें असमर्थ हो जाया करती हैं। निदान वह भोजन हमारे शरीरके काममें न आकर सड़ने लग जाता है, जिससे हमारे अंदर भाँति-भाँतिके उपद्रव पैदा हो जाते हैं—जैसे पेट फूलना, पेटमें दर्द, छातीमें जलन, खट्टी डकार, बारंबार दस्त इत्यादि। इन्हीं सब उपद्रवोंको हम अपचके नामसे पुकारते हैं।

केशव—अच्छा तो भोजन हमारे शरीरमें पचता कैसे है ?

पिता—यह उस सर्वशक्तिमान् परमात्माकी अलौकिक कारीगरीका एक अद्भुत उदाहरण है। हमारी खायी हुई रोटी, पूरी, फल, मेवे, पक्वान्न और मिठाइयाँ किस प्रकार अंदर जाकर निर्जीव होती हुई भी सजीव रक्त, मांस और हड्डियोंके रूपमें बदल जाती हैं—यह एक बड़ी मनोरञ्जक कहानी है। बड़े-बड़े वैज्ञानिकोंने इसे जाननेके लिये बड़ी-बड़ी खोजें की हैं और अपना सारा-का-सारा जीवन उसीमें खपा दिया है। बड़े होनेपर तुम उनकी लिखी हुई किताबें स्वयं पढ़ सकते हो। यहाँ अभी हम उनके आधारपर केवल कुछ मुख्य-मुख्य बातें ही तुम्हें बतला देंगे।

केशव—बतलाइये, मैं ध्यानसे सुन रहा हूँ।

पिता—अच्छा, तुम यह तो जानते ही होगे कि हमारे मकानकी यह दीवार किस-किस चीजसे मिलकर बनी है।

केशव—जी हाँ, ईंटोंको चूनेसे जोड़-जोड़कर बनायी गयी है।

पिता—हाँ, ठीक है। उसी प्रकार हमारा शरीर भी अत्यन्त नन्ही-नन्ही ईंटोंको जोड़कर बनाया गया है। हमारे शरीरकी ईंटे इतनी सूक्ष्म हैं कि बिना अणुवीक्षण-यन्त्रके देखी नहीं जा सकतीं। ये ईंटें कई आकारकी होती हैं—कोई छोटी, कोई लंबी, कोई पतली, कोई मोटी, कोई चिपटी और कोई उभरी हुई। दीवारकी ईंटोंसे हमारे शरीर-की ईंटोंमें एक बहुत बड़ा अन्तर यह भी है कि दीवारकी ईंटें निर्जीव होती हैं और हमारे शरीरकी ईंटें सजीव होती हैं तथा उनमें अपना-अपना काम करनेकी समझ भी होती है। विद्वानोंने इन ईंटोंका नाम 'सेल' (Cell) या 'कोषाणु' रक्खा है। इन्हीं कोषाणुओंके बढ़ने और पुष्ट होनेसे हमारा शरीर बढ़ता और पुष्ट होता है और इन्हींके क्षीण होनेसे हमारा शरीर क्षीण और दुर्बल हो जाता है। अस्तु, जिन-जिन तत्त्वोंसे ये कोषाणु बने हैं और जिनसे ये कायम रह सकते हैं, उन्हींको समय-समयपर आवश्यकतानुसार शरीरमें पहुँचाते रहना हमारे भोजनका एकमात्र उद्देश्य है।

केशव—किन-किन तत्त्वोंसे ये कोषाणु बने हैं?

पिता—ये कोषाणु प्रायः सोलह प्रकारके मूलतत्त्वोंसे बने

पाये जाते हैं, जिनके नाम ये हैं—(१) कार्बन, (२) नत्रजन, (३) हाइड्रोजन (४) आक्सीजन, (५) गंधक, (६) फास्फरस, (७) सोडियम, (८) पोटासियम, (९) कैल्शियम, (१०) मैग्नीशियम, (११) लीथियम, (१२) फ्लोरीन, (१३) क्लोरीन, (१४) आयडीन, (१५) सिलिकन तथा (१६) लोहा । इनमेंसे प्रथम चार तत्त्व हमारे मांसके कोषाणुओंको बनाने और बढ़ानेका काम करते हैं । उन चारोंके रासायनिक मेलसे एक यौगिक पदार्थ बन जाता है, जिसे अंग्रेजीमें 'प्रोटीन' कहते हैं । हम उसे 'मांस-पोषक पदार्थ' कह सकते हैं, क्योंकि उसके द्वारा हमारे मांसकी वृद्धि तथा पुष्टि होती है । शेष बारह तत्त्व हमारे अंदर रक्त, हड्डी तथा शरीरके अन्य भागोंको बनानेमें काम आते हैं । इनके भी अलग-अलग मेलोंसे अलग-अलग यौगिक रूप बना करते हैं, जिन्हें विद्वानोंने चार श्रेणियोंमें बाँटकर रक्खा है । उनके नाम हैं—(१) चिकनाईवाले या वसाजातीय पदार्थ (Fat), (२) कर्बोज या माड़ीकी जातिवाले पदार्थ (Carbo-hydrates), (३) खनिज पदार्थ जिनमें कई प्रकारके क्षार या नमक शामिल हैं और (४) जल ।

केशव—तो क्या यही सब चीजें हमारे भोजनमें भी पायी जाती हैं ?

पिता—हाँ, अलग-अलग खानेकी चीजोंमें ये पदार्थ अलग-अलग मात्रामें मौजूद रहते हैं—जैसे दूधका छेना,

दही, खोआ, मटर, सेमके बीज, मूँग, उड़द, अरहर तथा सोयाबीन आदिमें प्रोटीनकी मात्रा अधिक होती है; घी, तेल और मक्खन आदिमें वसाजातीय पदार्थ अधिक होता है; आलू, चावल, चीनी, साबूदाना और अरारोट आदिमें कर्बोज अर्थात् माड़ीवाले पदार्थकी अधिकता रहती है; इसी प्रकार शाक और हरी तरकारियोंमें खनिज पदार्थ अधिक होते हैं और जल तो स्वयं अपने असली ही रूपमें पिया जाता है तथा ताजे फल, शाक एवं दूधसे भी वह पर्याप्त मात्रामें मिल सकता है। इनके अतिरिक्त एक प्रकारकी चीज और है, जिसका हमारे भोजनमें होना बहुत जरूरी है और जिसके बिना हमारे शरीरका काम नहीं चल सकता।

केशव–वह क्या है ?

पिता–उसे अंग्रेजीमें 'विटामिन' (Vitamin) कहते हैं। हिंदीमें हम उसे 'प्राण-पोषक तत्त्व' के नामसे पुकार सकते हैं। जिस प्रकार ईंट, गारा, लोहा, लकड़ी सब मौजूद रहते हुए भी बिना मिस्त्री, मजदूर और राजगीरोंके कोई मकान नहीं खड़ा किया जा सकता, उसी प्रकार शरीरमें भोजनद्वारा सम्पूर्ण आवश्यक तत्त्वोंके पहुँच जानेपर भी बिना इन विटामिनोंके उनका कोई उपयोग नहीं किया जा सकता। आगे चलकर किसी दिन जब हम तुम्हें उचित खान-पान और उसकी व्यवस्थाके विषयमें अलग समझायेंगे, तब इन विटामिनोंका भी हाल अधिक विस्तारसे बतला देंगे

अभी यहाँ तुम इतना ही समझ लो कि ये विटामिन भिन्न-भिन्न खाद्य वस्तुओंमें अबतक कुल छः प्रकारके पाये गये हैं और इनके अभावमें शरीरकी बाढ़ बिल्कुल रुक जाती है तथा उसमें कई प्रकारके रोग भी पैदा हो जाते हैं। इनकी उपस्थिति वस्तुओंकी ताजी और स्वाभाविक अवस्थामें ही सबसे ज्यादा पाया जाती है; किंतु आगमें गरम करने, सुखाने या मसाला लगानेसे ये या तो बिल्कुल नष्ट हो जाते हैं या अधिकतर कमजोर पड़ जाते हैं। अस्तु, अब तुम्हें मालूम हो गया कि शरीरके सम्पूर्ण तत्त्व भोजन-सामग्रीमें मौजूद रहते हैं और भोजनसे ही हम उन्हें प्राप्त कर सकते हैं।

केशव—जी हाँ, परन्तु शरीर उन्हें किस प्रकार भोजनसे अलग करके प्राप्त करता है और किस प्रकार उन्हें अपनेमें मिला लेता है—यह अभी नहीं समझा।

पिता—हाँ, वही तो अब तुम्हें बतलाने जा रहा हूँ। जिस ढंगसे शरीर भोजनमेंसे आवश्यक तत्त्वोंको लेकर अपनेमें मिला लेता है, उसे '<u>पाचन-क्रिया</u>' कहते हैं। यह पाचन-क्रिया हमारे शरीरमें कुछ विशेष प्रकारकी मशीनोंद्वारा की जाती है, जो हमारे भोजनको अच्छी तरह कुचलकर, दल-मलकर तथा उसमें अपने पाससे कई प्रकारके रसोंको मिलाकर ऐसा कर देती हैं कि भोजनका उपयोगी भाग तो अलग होकर अंदरकी दीवारोंमें सोख जाता है तथा खूनमें मिल जाता है तथा उसका अनुपयोगी और बेकार भाग

मलके रास्ते बाहर निकल जाता है। जो भाग खूनमें पहुँचता है, उसका एक बार फिरसे पाचन होता है और तब वह शरीरमें बँटकर जहाँ जिस तत्त्वकी जरूरत होती है वहाँ जाकर मिल जाता है और शरीरको बनाने, कायम रखने या बढ़ानेका काम किया करता है।

केशव—अच्छा, तो ये भोजन पचानेवाली मशीनें कैसी हैं और किस प्रकार इनका काम होता है? जरा इसे भी बतला दीजिये।

पिता—सबसे पहली मशीन तो हमारा मुख ही है, जो हमारे भोजनके लिये भीतर जानेका बाहरी फाटक है। यहाँ दाँतोंकी दो पंक्तियाँ ऊपर और नीचेके जबड़ोंमें हीरेके टुकड़ोंके समान जड़ी हुई हैं। इनकी संख्या एक पूरी आयु-वाले मनुष्यके मुँहमें बत्तीस होती है—सोलह ऊपर और सोलह नीचे। किंतु आरम्भमें ये केवल बीस ही निकलते हैं, जो 'दूधके दाँत' कहलाते हैं। जिस समय बच्चा छः महीनेका होता है, उसी समयसे ये दूधके दाँत उगने लगते हैं और छः वर्षकी अवस्थातक पूरे बीस दाँत निकल आते हैं। बादमें ये गिरने लगते हैं और इनकी जगहपर नये और स्थायी दाँत निकलते हैं, जिनकी संख्या बत्तीस होती है। ये सब दाँत अठारह वर्षकी अवस्थातक पूरी तौरसे निकल आते हैं और उसी समयसे मनुष्य वयस्क या बालिग समझा जाने लगता है। हमारे स्वास्थ्यके लिये मुँहमें मजबूत और स्वस्थ

दाँतोंका होना बहुत जरूरी है। इनसे न केवल हमारे मुँहकी शोभा ही रहती है, बल्कि भोजनको कुचलने और पचने योग्य बनानेमें भी ये बड़े जरूरी औजार हैं। ज्यों ही भोजन-का कौर हमारे मुँहमें पहुँचता है, त्यों ही वह दाँतोंकी चक्की-में पिसने लगता है और जीभ भी उसे बराबर उलटती-पलटती रहती है तथा उसमें मुखका रस मिला-मिलाकर दाँतोंके नीचे ढकेलती रहती है, जिससे प्रत्येक ग्रास अच्छी तरह पिसकर चूर्ण हो जाता है और मुखके रसमें सन जाता है।

केशव—मुखमें रस कहाँसे आ जाता है?

पिता—यह रस वही है, जिसे हम 'थूक' या 'लार' कहते हैं। हमारे मुँहके भीतर दीवारोंमें ढकी हुई छः नन्हीं-नन्हीं ग्रन्थियाँ रहा करती हैं—तीन दाहिनी ओर और तीन बायीं ओर। यह रस उन्हींमेंसे बन-बनकर निकला करता है। तुम जानते हो कि तुम्हारा मुँह भीतरसे हर समय गीला ही रहता है, क्योंकि थोड़ा-थोड़ा रस इन ग्रन्थियोंसे हर समय ही निकला करता है। किंतु भोजनके समय यह रस-प्रवाह और तेज हो जाता है। जिससे भोजन उसमें अच्छी तरह सन सके। अच्छी तरह चबाकर खानेमें एक समयके भोजनमें करीब पावभर या डेढ़ पाव रस इन ग्रन्थियोंसे निकलता है।

केशव—इससे लाभ क्या है?

पिता—यह एक प्रकारका पाचक रस है, जिससे मिलकर भोजनका कर्बोज (Carbo-hydrates) अर्थात् माड़ीवाला

अंश शर्कराके रूपमें बदल जाता है और उसके साथ घुलकर मुँहमें ही पचने योग्य बन जाता है। बिना इस रसके मिले भोजनका यह अंश हमारे शरीरमें किसी प्रकार नहीं पच सकता और अपच रोगका कारण बनता है। यही कारण है कि जो लोग भोजनको बिना अच्छी तरह चबाये जल्दी-जल्दी निगल जाया करते हैं, वे बहुधा अपच और वायुकी शिकायतोंसे दुखी रहा करते हैं; और यदि अपच न हो तो भी ऐसे लोगोंका शरीर अपने भोजनसे विशेष लाभ नहीं उठा सकता। प्रायः देखा जाता है कि ऐसे लोग भोजन तो दूसरोंकी अपेक्षा बहुत अधिक किया करते हैं, किंतु भीतरसे उन्हें न तो तृप्ति होती है और न शरीरमें कोई स्फूर्ति या शक्ति ही दिखायी देती है। बात यह है कि अच्छी तरह कुचल-कुचलकर न खानेसे मुँहका रस भलीभाँति भोजनमें नहीं मिल सकता, जिससे उसका बहुत-सा अंश अनपचा ही रह जाता है और अनपचा ही वह मलके रास्ते बाहर निकल जाया करता है। शरीरकी आवश्यकता पूरी नहीं होती। अतएव जी भी नहीं भरता और सुस्ती तथा आलस्य घेरे रहते हैं। अस्तु, भोजनके भलीभाँति पचने और उससे पूरी-पूरी शक्ति प्राप्त करनेके लिये हर एक ग्रासको अच्छी तरह चबाना और उसमें मुँहकी लारको मिलने देना उपयोगी ही नहीं, अत्यन्त आवश्यक भी है। कदाचित् इस बड़ी आवश्यकताको समझकर ही प्रकृतिने कुछ ऐसा प्रबन्ध किया है कि भूख लगनेपर आहारको देखते ही, बल्कि स्वादिष्ट

दार्थोंका ध्यान करते ही मुँहमें पानी भर आता है। लारके मेलनेसे दूसरा लाभ यह भी है कि ग्रासको चबाने और लेके नीचे उतारनेमें आसानी पड़ती है।

केशव—अच्छा, फिर क्या होता है?

पिता—जब ग्रास दाँतोंके द्वारा अच्छी तरह पिस जाता है और मुखके रसमें सन जाता है तब वह गलेके अंदर एक नलीमें निगल लिया जाता है, जो उसे तुरंत पेटमें उतार देती है। यह नली 'भोजनकी नली' कहलाती है। इसके अतिरिक्त इसीसे सटी हुई सामनेकी तरफ एक दूसरी नली भी होती है, जो 'वायु-नली' कहलाती है और जिसके द्वारा श्वासकी हवा नाकसे होकर फेफड़ोंके अंदर जाया-आया करती है। इन दोनों नलियोंका मुँह आकर गलेके अंदर खुलता है; किंतु फिर भी यह ईश्वरकी कारीगरीका एक अद्भुत चमत्कार है कि जो भोजन या पानी हम गलेके अंदर निगलते हैं, वह सदैव भोजनकी नलीमें ही जाता है, वायुकी नलीमें नहीं जाता। यदि कहीं वह 'वायुकी नली' में चला जाय तो उसी क्षण हमारा दम घुट जाय और हम मर जायँ।

केशव—अच्छा तो इसमें तरकीब क्या की गयी है?

पिता—तरकीब बहुत बढ़िया है। वायु-नलीके मुँहपर एक ऐसा ढक्कन लगा रहता है, जो हर समय तो खुला रहता है, किंतु ज्यों ही हम कोई ग्रास गलेके अंदर घुटकने लगते हैं, त्यों ही वह दबकर बंद हो जाता है और भोजनका ग्रास

ढक्कनपरसे होता हुआ पीछेकी ओर भोजनकी नलीमें गिर पड़ता है। इसके पश्चात् वह ढक्कन फिर उछलकर पहलेकी तरह ऊपरको उठ जाता है, जिससे वायु-नलीका मुँह खुल जाता है और श्वासकी हवा फेफड़ोंमें फिर पूर्ववत् आने-जाने लगती है। कभी-कभी खानेके समय बोलते-बोलते या हँसते-हँसते ग्रासका कोई टुकड़ा वायु-नलीमें भी चला जाया करता है। उस समय हमको तत्काल धाँस चढ़ जाती है और जोर-जोरसे खाँसी आने लगती है, जिससे वह टुकड़ा वायु-नलीसे निकलकर फिर ऊपरको आ जाय। जबतक वह ऊपरको नहीं आता, तबतक हमारी खाँसी भी नहीं बंद होती और हमारा दम घुटता हुआ-सा जान पड़ता है।

केशव—सचमुच तरकीब तो बहुत ही बढ़िया है। ईश्वरकी कारीगरी हर जगह अनोखी ही दिखायी देती है। अच्छा तो निगलनेके बाद भोजनका ग्रास पेटमें चला जाता है ?

पिता—हाँ, दाँतोंके नीचे कुचलकर और मुँहके रससे पतला बनकर भोजनका ग्रास जब निगल लिया जाता है, तब वह भोजनकी नलीसे होता हुआ नीचे पेटमें उतर जाता है। भोजनकी नली लगभग दस इंच लम्बी होती है और नीचे पेटकी थैलीके मुँहसे जुड़ी रहती है। पेटकी यह थैली, जो उदर, आमाशय या पाकस्थलीके नामसे भी प्रसिद्ध है, आकारमें बहुत कुछ मशकसे मिलती हुई जान पड़ती है और पेड़ूके ऊपर कुछ बायीं ओरको लेटी हुई-सी पड़ी रहती है।

छूटने लगता है, जो भोजनके साथ-साथ अच्छी तरह सनता जाता है। यह रस हजारों नन्ही-नन्ही ग्रन्थियोंसे निकलता है, जो पाकस्थलीकी दीवारमें चारों ओर झिल्लीके नीचे ढकी रहती है। इधर यह होता है और उधर भोजनमें जो माड़ी-जातिवाला भाग मुँहकी लारमें मिलकर चीनी (Glucose) के रूपमें बदल जाता है, वह यहाँ आकर अन्तिम रूपमें पचता रहता है। जब पाकस्थलीका खट्टा रस काफी मात्रामें निकल चुकता है, तब भोजनका प्रोटीनवाला अंश भी पचने लग जाता है। इस रसमें मुख्यतः तीन प्रकारकी चीजें पायी जाती हैं—(१) जामन (Renin), (२) पचाइन (pepsin)और(३) नमकका तेजाब (Hydrochloric acid)। नमकके तेजाबके कारण ही यह रस खट्टा होता है और अपच रोगमें जो खट्टी-खट्टी डकारें आया करती हैं, वह भी इसीके कारण खट्टी हुआ करती हैं। यह रस प्रोटीनको एक घुलने योग्य रूप (peptone) में बदल देता है, जिससे वह पतली पड़ जाती है और फिर उसका कुछ अंश पेटकी दीवारोंमें सोखकर खूनके साथ मिल जाता है। बाकी बचा हुआ अंश भोजनके अन्य भागोंके साथ खूब मथ जानेके बाद मुलायम और पतला होकर पाकस्थलीके दूसरे द्वारसे अँतड़ियोंमें चला जाता है। डाक्टरोंने यह भी देखा कि जब कभी वह आदमी कोई ऐसी चीजें खा लेता था, जो आसानीसे न पच सकती थीं अथवा हानिकारक होती

थीं, तो उसके पेटकी भीतरी दीवारें अत्यन्त प्रदाहित हो उठती थीं और सुर्ख पड़ जाती थीं। पाकस्थलीका जो दूसरा द्वार अँतड़ियोंकी तरफ है, वह भी ईश्वरकी कारीगरी-का एक अद्भुत नमूना है।

केशव—सो कैसे ?

पिता—यह दरवाजा ऐसा है कि जबतक पाकस्थलीकी क्रिया भोजनपर पूरी तौरसे समाप्त न हो जाय, तबतक वह भोजनको अँतड़ियोंमें नहीं घुसने देता, बल्कि उन्हें पाकस्थलीमें ही वापस फेंक देता है। किंतु जब पाकस्थली-का काम पूरा हो चुकता है और भोजनका जितना भाग वहाँ पचना चाहिये, पच चुकता है तब वह दरवाजा स्वयं खुल जाता है और उस अधपचे मुलायम भोजनको अँतड़ियोंके अंदर जाने देता है। अब तुम्हीं सोचो कि यदि कोई मिस्त्री हमारे मकानमें ऐसे दरवाजे बना दे, जो केवल उन्हीं लोगोंको अंदर जाने दे जिन्हें जाना उचित है, और बाकी सब लोगोंको बाहर ही रक्खे, तो तुम उस मिस्त्रीको कैसा कारीगर समझोगे ?

केशव—दुनियामें उसे बेजोड़ कारीगर समझूँगा। निस्सन्देह ईश्वरकी कारीगरी हर बातमें बेजोड़ ही दिखायी देती है, यह मैं समझ रहा हूँ। अच्छा, पिताजी ! ये अँतड़ियाँ क्या चीज हैं और इनके अंदर भोजनका क्या होता है ?

पिता—ये अँतड़ियाँ एक बहुत लम्बी गली हैं, जिनके

भीतरसे होकर हमारा भोजन अपनी अन्तिम यात्रा समाप्त करता है। लगभग नौ गज लम्बे ट्यूब या नलके रूपमें ये हमारी पाकस्थलीके नीचे पड़ी रहती हैं। इनके दो भाग होते हैं—एक 'क्षुद्रान्त्र' या छोटी आँत और दूसरा 'बृहदन्त्र' या बड़ी आँत। क्षुद्रान्त्रकी लंबाई करीब सात गज अर्थात् २१ या २२ फुट होती है और बृहदन्त्रकी लंबाई लगभग '५ फुट होती है। किंतु बृहदन्त्रकी नली क्षुद्रान्त्रकी नलीसे चौड़ाईमें ज्यादा होती है, इसीसे वह बड़ी आँत और क्षुद्रान्त्र छोटी आँत कहलाती है। पाकस्थलीका अधपचा भोजन क्षुद्रान्त्र अर्थात् छोटी आँतमें ही जाता है। यह आँत सात गज लम्बी होती हुई भी इस प्रकार गुड़री मारे लपेटी पड़ी रहती है कि बहुत थोड़ी जगहमें आ जाती है। भोजनका वह सम्पूर्ण भाग जो पाकस्थलीमें नहीं पच सकता या अधपचा रह जाता है, यहीं आकर पचता है।

केशव—यहाँ वह कैसे पचता है?

पिता—पाकस्थलीसे निकलकर भोजनको क्षुद्रान्त्रमें करीब २२ फीट लंबी यात्रा करनी पड़ती है। इस बीचमें उसके साथ तीन प्रकारके रसोंका मेल होता है और साथ ही वह फिरसे अच्छी तरह मथा भी जाता है, जिससे उसका रहा-सहा सम्पूर्ण उपयोगी अंश भी घुलकर पच जाता है।

केशव—उसमें ये तीन प्रकारके रस कौन-कौन-से मिलते हैं?

पिता—पहला रस तो क्षुद्रान्त्रकी भीतरी दीवारोंसे ही निकला करता है। जिस प्रकार मुख और पाकस्थलीकी दीवारोंमें छोटी-छोटी ग्रन्थियाँ रहती हैं, उसी प्रकार क्षुद्रान्त्रमें भी होती हैं और उन्हींमेंसे यह रस छूटता रहता है। इसे हम 'आन्त्रिक' रस कह सकते हैं। इसके अतिरिक्त दो प्रकारके और रस यहाँ वाहरसे भी आकर मिलते हैं, जिनके नाम हैं—(१) पित्तरस और (२) क्लोमरस।

केशव—ये रस कहाँसे आते हैं?

पिता—इनमेंसे पित्तरस तो हमारे यकृत् (अर्थात् जिगर) नामक ग्रन्थिसे वनकर आता है और क्लोमरस क्लोम-ग्रन्थिसे वनकर आता है। ये दोनों ही ग्रन्थियाँ हमारी अँतड़ियोंसे वाहर रहती हैं और अपना-अपना रस स्वतन्त्ररूपसे तैयार किया करती हैं। यकृत्का स्थान तो हमारी दाहिनी अन्तिम पसलियोंके नीचे है और यह हमारे शरीरकी सबसे बड़ी ग्रन्थि है। इसका आकार लगभग ९ या १० इंचतक लंवाईमें होता है और इसीके साथ एक अमरूदकी आकृति-वाली थैली भी लगी रहती है, जिसे 'पित्ताशय' (call. bladder) कहते हैं। जो कुछ पित्तरस यकृत्में तैयार होता है, वह सब आकर इसी थैलीमें भर जाता है और फिर यहींसे एक नलीद्वारा आवश्यकता पड़नेपर क्षुद्रान्त्रमें जाता है। पित्तका रस कुछ पीलापन लिये हुए हरे रंगका होता है। इसमें कई प्रकारके नमक और दो प्रकारके रंग

घुले रहते हैं। इसकी प्रतिक्रिया क्षारीय और स्वाद कड़ुआ हुआ करता है। क्लोम-ग्रन्थि हमारी पाकस्थली (अर्थात् पेट) के पीछेकी तरफ नीचेकी ओर रहती है। इसकी लंबाई ५ या ६ इंच और तौल एक या डेढ़ छटाँकतक होता है। इसमेंसे जो रस बनकर निकलता है वह स्वच्छ वर्णवाला, पतला और क्षारीय होता है। क्षुद्रान्त्रमें भोजन एक फुट भी आगे बढ़ने नहीं पाता कि उसमें पित्त और क्लोम दोनों ही प्रकारके रस आकर मिल जाते हैं।

केशव—फिर क्या होता है ?

पिता—बस, फिर इन दोनों रसोंमें सना हुआ भोजन क्षुद्रान्त्रमें जैसे-जैसे आगे बढ़ता जाता है, वैसे-ही-वैसे वह आँतकी दीवारोंकी गतिसे खूब मथता जाता है। यह गति केंचुआ या जोंककी चालसे बहुत कुछ मिलती-जुलती है, अर्थात् पीछेसे फूलकर लहरकी तरह आगेकी ओरको ढकेलती आती है, जिससे भोजन मथनेके साथ-साथ आगेको सरकता जाता है। पेटके रसकी जो खटास उसमें मौजूद रहती है, वह इन दोनों रसोंके खारेपनके कारण दूर हो जाती है और साथ ही उसमें क्षुद्रान्त्रकी भीतरी ग्रन्थियोंका रस भी मिलता जाता है। इस प्रकार ये तीनों रस हमारे भोजनके सम्पूर्ण शरीरोपयोगी अंश—अर्थात् प्रोटीन, लवण, वसा और कर्वोज—को अच्छी तरह घुलाकर हमारे शरीरमें प्रवेश करनेयोग्य बना देते हैं। वसा अर्थात् चिकनाईवाले

पदार्थको पचानेके लिये पित्तरस मुख्यरूपसे काम आता है और इसीलिये घी, मक्खन, तेल आदिका पाचन क्षुद्रान्त्रमें ही आकर होता है। पित्तके संयोगसे ये चीजें एक दुधिया रंगके घोल (या साबुनके घोल) में बदल जाती हैं और तब वे शरीरके ग्रहण करने योग्य होती हैं। जिन लोगोंका यकृत् ठीक-ठीक नहीं काम करता और पित्तका रस यथोचित मात्रामें नहीं बनता, उनके शरीरमें चिकनाईवाले पदार्थोंका पाचन भी नहीं होता—जिससे वे शरीरके बाहर (मलके साथ) अनपचे ही रूपमें निकल जाया करते हैं और शरीर दुर्बल बना रहता है। लवणजातीय भाग और जलको पचानेमें किसी सहायताकी जरूरत नहीं पड़ती। वे ज्यों-के-त्यों शरीरमें ग्रहण कर लिये जाते हैं। प्रोटीनका कुछ अंश पेटमें पचता है और बाकी क्षुद्रान्त्रमें। कर्बोज या माड़ीवाले भागका पाचन भी, जो मुखके रससे नहीं हो पाता, वह क्षुद्रान्त्रमें आकर और क्लोम-रसके साथ मिलकर हो जाता है। इस प्रकार भोजनका सम्पूर्ण उपयोगी भाग क्षुद्रान्त्रमें पचकर शरीरमें ग्रहण कर लिया जाता है और बाकी अनपचा तथा अनुपयोगी भाग, जो खुज्ञीके रूपमें बच रहता है, बड़ी आँतमें चला जाता है। और वहींसे मलके रास्ते बाहर निकल जाता है। छोटी आँत और बड़ी आँतके बीचमें एक दरवाजा होता है, जो चूहेदानीके द्वारके समान केवल एक ही ओरको अर्थात् बड़ी आँतकी ही तरफ खुल सकता है। अतएव इस द्वारसे छोटी आँतकी

चीजें बड़ी आँतमें तो चली जाती हैं; किंतु बड़ी आँतकी कोई वस्तु छोटी आँतमें वापस नहीं आ सकती । बड़ी आँत दाहिनी ओर कोखके पाससे आरम्भ होकर पहले ऊपरकी ओर जाती है और फिर बायीं ओरको घूमकर छोटी आँतको घेरेमें डालती हुई नीचे आकर मलद्वारमें खुलती है । बड़ी आँतको हम 'मल-भाण्ड' भी कह सकते हैं; क्योंकि यही स्थान मल या विष्ठाके एकत्रित होनेकी जगह है । जबतक मल-द्वारसे मल बाहर नहीं निकल जाता, तबतक वह यहीं जमा होता रहता है । इस प्रकार मुखसे लेकर बड़ी आँत-तक पहुँचनेमें हमारे भोजनको करीब १५ से लेकर १८ घंटेतकका समय लग जाता है, अर्थात् ५ या ६ घंटे तो उसे पेटमें रहना पड़ता है और दस या बारह घंटे क्षुद्रान्त्रकी २२ फीट लंबी यात्रामें लग जाते हैं ।

केशव—अच्छा तो छोटी आँतसे भोजनके तमाम उपयोगी पदार्थोंको शरीर ग्रहण कैसे करता है ?

पिता—भोजन जब ऊपर कहे हुए तीनों प्रकारके रसोंमें सनकर पतला पड़ जाता है और मथा जानेके कारण बिल्कुल चूर भी हो जाता है, तब क्षुद्रान्त्रकी दीवारोंमें उसके तमाम उपयोगी भाग सोख लिये जाते हैं । क्षुद्रान्त्रकी भीतरी दीवारें बिल्कुल चिकनी नहीं होतीं, बल्कि मखमली रूपकी हुआ करती हैं । जिस प्रकार मखमलमें खूब घने और बारीक रोयें हुआ करते हैं, उसी प्रकार क्षुद्रान्त्रकी

भीतरी दीवारोंमें भी हुआ करते हैं । ये रोयें अत्यन्त सूक्ष्म होते हैं और उनकी लंबाई $\frac{१}{३०}$ इंचसे अधिक नहीं होती । दीवारोंमें ये इतने घने उगे रहते हैं कि नयी चालके (निकलवाले) एक अधन्नेके नीचे कम-से-कम पाँच सौ ऐसे रोयें आ सकते हैं । ये रोयें 'केशिका' (Villi) कहलाते हैं; क्योंकि ये केशों (अर्थात् बालों) की तरह बारीक होते हैं, किंतु वास्तवमें ये रगें हैं, जो करोड़ोंकी संख्यामें दीवारसे जीभकी तरह निकली रहती हैं और भोजनके रसोंको चाटा या चूसा करती हैं । इनमेंसे कुछ केशिकाएँ (लिंफ केशिकाएँ) वसाजातीय रसोंको चूसती हैं और कुछ (रक्त केशिकाएँ) प्रोटीन और शर्कराजातीय रसोंको । जल और लवणके रस तो दोनों ही प्रकारकी केशिकाओंमें पहुँचते हैं । इस प्रकार सम्पूर्ण उपयोगी भाग इन्हीं नन्ही-नन्ही जीभोंद्वारा चाट या चूस लिया जाता और फिर वह हमारे रक्तमें पहुँच जाता है ।

केशव—रक्तमें पहुँचकर उसका क्या होता है ?

पिता—रक्तमें उसका दोबारा पाचन होता है, जिसे हम 'आत्मीकरण'के नामसे पुकार सकते हैं । यह क्रिया आक्सीजन गैसकी सहायतासे होती है । 'स्वच्छ वायु-सेवन' के विषयपर समझाते समय मैं तुमको बतलाऊँगा कि हमारे शरीरके तत्त्व (अर्थात् कोषाणु) किस प्रकार प्रतिक्षण फूटते-टूटते और जल-जलकर भस्म होते

रहते हैं और हमारे श्वासद्वारा ली हुई हवाका आक्सीजन ही उन्हें जला-जलाकर रक्तको साफ किया करता है। वास्तवमें आक्सीजन एक बड़ी तेज गैस होती है और उसमें कितने ही प्रकारकी चीजोंके साथ मिल जानेका गुण भी वर्तमान है। उदाहरणके तौरपर लोहेके साथ जब वह मिलती है तब लोहेको मुर्चेके रूपमें बदल देती है। इसी प्रकार कार्बनसे मिलकर उसे कार्बोनिक एसिड गैस बना देती है। इस कार्बनके साथ आक्सीजनके मिलनेकी क्रियाको ही हम 'जलना' कहते हैं। वैज्ञानिक लोग उसीको 'औपदीकरण' के नामसे पुकारते हैं। कोयला भी मुख्यतः कार्बन होता है और इसके साथ जब (हवाके) आक्सीजनका मेल होता है तभी वह जलने लगता है। किंतु लोहेकी अपेक्षा कार्बनमें (आक्सीजनके मेलसे) तेजी ज्यादा पैदा होती है। इसलिये उनमेंसे गरमी भी निकलने लगती है। और जो कार्बोनिक एसिड गैस पैदा होती है, वह धुएँके साथ निकल जाती है तथा राख बच रहती है। इसी प्रकार हमारे रक्तमें भी जो कुछ हिस्सा कार्बनका होता है, वह आक्सीजनके मेलसे जल जाता है और उससे जो कार्बोनिक एसिड गैस तथा राख बनती है, वह श्वास-द्वारा बाहर निकल जाती है तथा जो गरमी पैदा होती है, वह हमारे शरीरमें बनी रहती है और हमें स्फूर्ति देती है। अस्तु, यहाँतक तो आक्सीजनकी जलानेवाली क्रिया

हुई। अब देखो कि जो भोजनका उपयोगी अंश खिंच-खिंच-कर क्षुद्रान्त्रसे हमारी शिराओंमें पहुँचता है, वह हमारे रक्तके साथ बहता हुआ हृदयके दाहिने भागमें जाता है। उसके साथ ही खूनमें शरीरके बहुत-से टूटे-फूटे कोपाणु भी रहा करते हैं। अतएव इन दोनों प्रकारकी चीजोंसे लदा हुआ खून जब हमारे हृदयमें पहुँचता है तब वह उसे फेफड़ोंमें फेंक देता है। फेफड़ोंमें श्वाससे आयी हुई हवाके आक्सीजनसे उसका मेल होता है, जिससे टूटे-फूटे कोपाणु भस्म हो जाते हैं। साथ ही हमारे भोजनके जो वसा और कर्बोज जातिवाले भाग खूनमें मौजूद रहते हैं, वे भी मुख्यतः कार्बनसे बने हुए होनेके कारण आक्सीजनके मेलसे जल जाते हैं और इन सबके जलनेसे जो गरमी छूटती है, वह हमारे शरीरको गरम रखने तथा शक्ति देनेका काम करती है। प्रोटीन और लवणका अंश ज्यादा जलता नहीं, बल्कि रक्तके साथ-ही-साथ शुद्ध हो जाता है और फिर उसीके साथ हृदयमें लौटकर शरीरभरमें चक्कर लगाता है तथा शरीरके टूटे-फूटे कोपाणुओं-की जगह पूरी करने और वहाँकी मरम्मत करनेके काम आता है। इस प्रकार तुम देखते हो कि तुम्हारे भोजनको पचाने और उससे तुमको परिपुष्ट रखनेके लिये तुम्हारे शरीरमें कितने प्रकारके कल-कारखाने चला करते हैं और उन सबोंकी रचना तथा प्रबन्धमें कैसी-कैसी अद्भुत कारीगरी की गयी है।

केशव—निस्सन्देह मैं समझ रहा हूँ। पहले दिन ईश्वरकी कारीगरीके सम्बन्धमें आपने मुझे जो प्रार्थना सिखायी थी, उसकी इन पंक्तियोंका अर्थ वास्तविक रूपसे मेरी समझमें अब आ रहा है—

जो-जो हम पदार्थ हैं खाते। स्वाद जीभपर वे दिखलाते॥
फिर वे आँतोंमें हैं जाते। लोहू बनते ताकत लाते॥
अद्भुत है मशीन, बलिहारी। कैसी कारीगरी तुम्हारी॥

पिता—अच्छा तो अब इस बातका सदैव ध्यान रखना कि खाने-पीनेमें स्वादके लालचमें पड़कर कभी ऐसी भूल न कर बैठना, जिससे हमारी इन मशीनोंके काममें गड़बड़ी पैदा हो; क्योंकि इनकी गड़बड़ीसे ही अधिकतर तमाम रोगोंका जन्म हुआ करता है। उदाहरणार्थ, पेट या आँतोंका पाचन बिगड़नेसे मन्दाग्नि, कब्ज, शूल, अतिसार, अफरा आदि रोग हो जाते हैं और खूनमें होनेवाला (दूसरे प्रकारका) पाचन बिगड़नेसे वाई, गठिया, मधुमेह आदि उपद्रव खड़े हो जाते हैं। लेकिन अब समय बहुत हो गया है। आगे किसी दिन तुम्हें समझायेंगे कि हमें कब, कैसे और किस-किस प्रकारका भोजन करना चाहिये और किन बातोंसे बचना चाहिये।

केशव—बहुत अच्छा।

भोजन-व्यवस्था

पिता—केशव ! उस दिन मैं बतला रहा था कि भोजन हमारे शरीरमें किस प्रकार पचता है और किस प्रकार वह हमारे शरीरको बनाने, बढ़ाने और उसमें शक्ति पैदा करनेके हेतु काम आता है। अब आज यदि तुम सुनना चाहो तो बतलाऊँगा कि शरीरको इस प्रकार बनाने, बढ़ाने और सशक्त बनानेमें कौन और किस प्रकारका भोजन हमारे लिये सबसे अधिक उपयोगी है और उसे हमको किस प्रकार खाना चाहिये।

केशव—जी हाँ, बताइये, मैं अवश्य सुनूँगा।

पिता—अच्छा, तुम्हें याद है कि मैंने उस दिन कौन-कौन-सी चीजें बतलायी थीं, जिनका हमारे शरीरको भोजनसे प्राप्त होना जरूरी है।

केशव–जी हाँ, आपने भोजनसे प्राप्त होनेवाले छः प्रकारके पदार्थ बतलाये थे। उनके नाम हैं—(१) प्रोटीन या मांसवर्धक पदार्थ, (२) वसाजातीय, (३) कार्बोहाइड्रेट्स (या कार्बोज) जो तापवर्धक पदार्थ हैं, (४) खनिज या लवणजातीय पदार्थ, (५) विटामिन या प्राणपोषक पदार्थ और (६) जल।

पिता–शाबाश ! तुम्हारी स्मरणशक्ति बहुत मजबूत है। अच्छा तो, अब यह आसानीसे समझा जा सकता है कि जिस भोजनसे हमारा शरीर इन चीजोंको अधिक-से-अधिक परिमाणमें और कम-से-कम प्रयासद्वारा ग्रहण कर सकता हो, वही भोजन हमारे लिये सबसे उत्तम कहा जायगा।

केशव–अवश्य।

पिता–बस, तो फिर अब इसी दृष्टिसे हम प्रत्येक खाद्य वस्तुकी जाँच करेंगे और देखेंगे कि वह हमारे भोजनकी सूचीमें कौन-सा स्थान ग्रहण कर सकती है। सबसे पहले हम उन वस्तुओंको लेंगे जिनसे हमारे शरीरको प्रोटीन प्राप्त होता है। तुम जानते हो कि प्रोटीन क्या चीज है ?

केशव–जी हाँ, इससे हमारी मांसपेशियाँ बनती हैं।

पिता–हाँ, मांस वास्तवमें प्रोटीन ही है, चाहे वह पशु-पक्षीका मांस हो, चाहे मनुष्यका अथवा पेड़-पौधोंका हो, पशु-पक्षियोंके मांसके प्रोटीनको 'पशु-प्रोटीन' कहते हैं

और पेड़-पौधोंके प्रोटीनको 'वनस्पति-प्रोटीन' कहते हैं। वनस्पति प्रोटीनकी सबसे अधिक मात्रा मटर, मूँग, अरहर, सोयाबीन आदि द्विदल अनाजोंमें मिलती है। यह सब प्रोटीन वास्तवमें नाइट्रोजन, गंधक, फास्फरस, लोहा इत्यादि १८ प्रकारके तत्त्वोंका एक रासायनिक सम्मिश्रण है, किंतु जिस प्रकार केवल पीले, लाल और नीले तीन ही रंगोंके मेलसे सैकड़ों प्रकारके रंगीन चित्र तैयार किये जा सकते हैं, उसी प्रकार इन अठारहों तत्त्वोंके भिन्न-भिन्न क्रम और मात्राके योगसे लाखों और करोड़ों जातिके प्रोटीन बन सकते हैं, जो एक दूसरेसे रूप, गुण और स्वभावमें बिल्कुल भिन्न हुआ करते हैं। हर एक प्राणीका प्रोटीन दूसरे प्राणीके प्रोटीनसे बिल्कुल भिन्न ही जातिका देखा जाता है। यहाँतक कि वनस्पति-प्रोटीनमें भी पालकका चौराईसे भिन्न होता है और चौराईका मटर या मूँगसे भिन्न। इस प्रकार अलग-अलग चीजोंमें अलग-अलग जातिके प्रोटीन पाये जाते हैं। हमारी पाचनेन्द्रियोंका काम यह है कि इन सब प्रोटीनोंका विश्लेषण करके और उनके अणुओंको तोड़-फोड़कर उनके अठारहों तत्त्वोंको फिरसे मिला दें और उन्हें मानव-प्रोटीनके रूपमें बदल दें, जिससे हमारा शरीर उन्हें ग्रहण कर सके और अपनेमें मिला सके। इस कार्यमें यदि कोई तत्त्व किसी प्रोटीनमें हमारी आवश्यकतासे कम पाया गया तो वह प्रोटीन अच्छा नहीं कहा जा सकता और यदि अधिक पाया

गया तो वह भी बेकार मलके रास्ते बाहर निकल जाता है।

केशव—तो सबसे उत्तम प्रोटीन कौन-सा होता है और वह किन-किन चीजोंमें पाया जाता है।

पिता—सबसे उत्तम प्रोटीन वह है जिसमें मनुष्य-मांसका प्रोटीन बननेके लिये जिन-जिन तत्त्वोंकी जरूरत होती है वे सब ठीक उसी मात्रामें मौजूद हों, जैसा वे हमारे शरीरमें पाये जाते हैं। इस दृष्टिसे देखनेपर पशु-प्रोटीनमें सबसे उत्तम और निर्दोष है दूध और दूधसे बनी हुई चीजोंका प्रोटीन, तथा वनस्पति-प्रोटीनमें है हरे शाक—जैसे पालक और चौराईका प्रोटीन। अंडे और पशुओंके मांसका प्रोटीन भी मनुष्यके प्रोटीनसे मिलता-जुलता होता है, किंतु वह दूधके प्रोटीनसे घटिया दरजेका होता है और उसमें सबसे बड़ा दोष यह है कि वह पेटमें बहुत जल्दी सड़ने लग जाता है और उसके द्वारा यूरिक एसिड नामका जहर भी अधिक मात्रामें बना करता है, जिससे गुर्दोंका काम बढ़ जाता है और शरीरमें भाँति-भाँतिके भयंकर रोग उत्पन्न हो जाते हैं। उदाहरणार्थ—सब प्रकारकी वातजनित पीड़ाएँ, गठिया, एपेण्डिक्स प्रदाह (Appendicitis) कैंसर, रक्तावरोध आदिकी शिकायतें प्रायः मांसाहारियोंमें ही पैदा हुआ करती हैं। अतएव नैतिक या धार्मिक दृष्टिसे कोई न भी विचार करे तो केवल स्वास्थ्यकी भी दृष्टिसे भी मांस खाना मनुष्यके लिये किसी प्रकार भी उचित या कल्याणकारी नहीं कहा जा सकता।

केशव—लेकिन दुनियामें मांस खानेवाले तो बहुत हैं ?

पिता—हाँ हैं, परंतु उनमें जो विचारवान् लोग हैं वे धीरे-धीरे अपनी इस बुरी आदतको छोड़ते जाते हैं। शाकाहारियोंकी संख्या यूरोप और अमेरिकामें भी दिन-पर-दिन बराबर बढ़ती जा रही है। जर्मनीका सर्वेसर्वा और गत महायुद्धका मुख्य अभिनेता हर हिटलर भी शाकाहारी ही था और उसके भोजनकी सादगी सारे संसारमें प्रसिद्ध हो चुकी है। हमारी भारतीय सेनाके अधिकतर ब्राह्मण, सिक्ख और राजपूत लोगोंका आहार भी मुख्यतः केवल गेहूँ, जौ और बाजरा ही हुआ करता है, किंतु फिर भी वे अपने मांसाहारी शत्रुओंको यूरोप और मिस्रके मैदानमें कितनी ही बार नीचा दिखाकर अपने बल और पौरुषकी धाक सारे संसारमें जमा चुके हैं। वास्तवमें मांसाहार मनुष्य-जातिके लिये सर्वथा अस्वाभाविक कार्य है। धार्मिक या नैतिक दृष्टिसे देखो, चाहे स्वास्थ्यकी दृष्टिसे, निरपराध और अबोध पशुओंकी हत्या करके उनका मांस खाना मनुष्यके लिये किसी प्रकार भी कदापि उचित या स्वाभाविक नहीं कहा जा सकता।

केशव—अच्छा तो फिर भी प्रोटीनकी समुचित मात्रा प्राप्त करनेके लिये हमें कौन-कौन-सी चीजें खानी चाहिये ?

पिता—पहले कह तो चुका हूँ कि सबसे बढ़िया प्रोटीन दूध और दूधसे बनी हुई चीजोंमें रहा करता है। मांसका

प्रोटीन दूधके प्रोटीनका मुकाबला कर ही नहीं सकता। अतएव यदि मांसाहारी लोग मांसको छोड़कर दूधका सेवन यथेष्ट मात्रामें करने लग जायँ तो उनका शरीर मांसाहारकी खराबियोंसे बचकर अधिक अच्छा बन जाय। जिनको दूध न पचता हो वे दही, मट्ठा या दूधका छेना खा सकते हैं। इनमें भी वही प्रोटीन है जो दूधमें है। साथमें यदि सेम, मटर, सोयाबीन, दाल अथवा पालक, बथुआ आदिके हरे साग भी खाये जायँ तो प्रोटीनकी कमी शरीरमें कभी और किसी प्रकार भी नहीं पायी जा सकती।

केशव—अच्छा, अब वसाजातीय पदार्थ क्या हैं और कैसे प्राप्त हो सकते हैं? वह भी बतलाइये।

पिता—हाँ, सुनो। वसाकी भी दो किस्में होती हैं—(१) पशु-वसा—जैसे जानवरोंकी चर्बी अथवा घी, मक्खन इत्यादि और (२) वनस्पति-वसा—जैसे तिल, सरसों, अलसी, मूँगफली आदिका तेल इत्यादि। वसा और कार्बोज शरीरमें गरमी या ताप पैदा करनेके लिये एक प्रकारसे ईंधनका काम देते हैं और इन्हींसे शरीरको शक्ति तथा स्फूर्ति भी मिलती है। जिस समय भोजनमें वसाका भाग आवश्यकतासे अधिक हो जाता है तो वह शरीरमें चर्बीके रूपमें इकट्ठा होता रहता है और यदि वह बहुत ही अधिक मात्रामें न इकट्ठा हो जाय, तो उससे शरीरका कल्याण ही होता है; क्योंकि इससे न केवल शरीरका बाहरी रूप गोलदार और सुडौल

दीखता है, बल्कि भीतरके कई कोमल अङ्ग जैसे आँत, गुर्दे इत्यादि भी चर्बीकी हल्की पर्त चढ़ी रहनेके कारण सर्दी-गरमीके प्रभावसे बचते रहते हैं। साथ ही इनपर राई, लाल मिर्च आदि तेज मसालोंका भी विशेष हानिकारी प्रभाव नहीं पड़ने पाता। इसीसे किसी-किसी प्रान्तमें लाल मिर्चका दोष दूर करनेके लिये लोग उसके साथ अधिक घीका प्रयोग करते हैं। वसाके अभावमें तेज मसाले आँतोंकी दीवारमें प्रदाह उत्पन्न कर सकते हैं, किंतु उनके साथ यदि घी या मक्खन खाया जाय तो उनकी तेजी कम हो जाती है। लेकिन याद रहे कि शरीरमें बहुत अधिक चर्बीका जमा होना भी अच्छा नहीं है, क्योंकि उससे भीतरी यन्त्रोंके काममें बड़ी बाधा पहुँचती है और शरीर बिल्कुल सुस्त, ढीला, मोटा और बेढंगा बन जाता है। जिन लोगोंके शरीरमें चर्बी अत्यधिक बढ़ गयी हो, उन्हें सब प्रकारकी चिकनाईवाले पदार्थोंसे परहेज करना चाहिये और भोजनमें फल तथा शाककी मात्रा काफी बढ़ा देनी चाहिये। साथ ही कुछ शारीरिक परिश्रम भी बढ़ा देना चाहिये। इससे शरीरकी फालतू चर्बी छँट जायगी और शरीर सुडौल तथा स्वस्थ बन जायगा।

केशव—क्या प्रोटीनकी तरह वसाजातीय पदार्थ भी उत्तम, मध्यम आदि श्रेणीमें विभाजित किये जा सकते हैं?

पिता—हाँ, अवश्य। सबसे ऊँची श्रेणीमें हम मक्खन, घी आदिको रख सकते हैं; क्योंकि इनमें विटामिन ए (A)

और डी (D) की मात्रा बहुत अधिक रहती हैं। इसके बाद नारियलके तेलका नम्बर आता है; क्योंकि यह अन्य तेलोंकी अपेक्षा अधिक सुपाच्य होता है और इसको हमारा शरीर अधिक सरलताके साथ ग्रहण कर सकता है। तीसरी श्रेणीमें हम मूँगफलीके तेलको रख सकते हैं और सरसों, तिल तथा और दूसरे तेलोंको हम चौथी या अन्तिम श्रेणीमें रख सकते हैं। हमारे यहाँ बाजारोंमें आजकल जो मक्खन या घी मिलता है वह बिल्कुल शुद्ध और असली बहुत कम होता है। ज्यादातर उसमें मिलावट ही रहती है। विशेषकर जबसे वनस्पति घीका प्रचार हुआ तबसे तो यह मिलावटकी मात्रा और भी बढ़ गयी। किंतु फिर भी जैसा कुछ वह मिलता है उसका भी दाम इतना महँगा पड़ता है कि गरीब भारतीयों-की समाईसे वह बाहर है। इसलिये घी और मक्खनका व्यवहार यहाँ गरीबोंमें प्रायः बिल्कुल ही नहीं किया जाता और तेलका व्यवहार भी यद्यपि दक्षिण भारतमें (विशेषतः मूँगफलीका तेल) बहुत ज्यादा प्रचलित है, किंतु उत्तर भारतमें वह अच्छी दृष्टिसे नहीं देखा जाता। उसके विरुद्ध यह गलत धारणा फैली हुई है कि वह हमारे शरीरको हानि पहुँचाता है। लेकिन याद रहे कि तेल भी घीके समान न सही, तो भी काफी लाभदायक और पौष्टिक पदार्थ है और जहाँ घी न मिले वहाँ इसीका सेवन करना चाहिये। साथ ही ताजे हरे पत्तीवाले शाक तथा कार्बोज या माड़ी जातिवाले

पदार्थ भी खाना न भूलना चाहिये, क्योंकि इनसे ही तेल और घीके पचनेमें सहायता मिलती है।

केशव—अच्छा, कार्बोज या माड़ी जातिकी वस्तुएँ कौन-कौन-सी हैं ?

पिता—गुड़, चीनी, शहद, अरारूट, साबूदाना इत्यादि कार्बोजके ही उदाहरण हैं। आलू, शकरकंद, चावल, जौ आदिमें भी इसकी मात्रा बहुत अधिक पायी जाती है। भोजनके समय इसकी पाचन-क्रिया मुखसे ही आरम्भ होती है। मुखकी लारके साथ मिलकर इसमें एक प्रकारका रासायनिक परिवर्तन होने लगता है, जिससे यह शर्कराका रूप धारण कर लेता है और फिर पेटमें पहुँचकर आसानीसे पच जाता है। शरीरमें वसाकी तरह यह भी ईंधनका काम देता है। और हमारे अंदर गरमी पैदा करके शक्ति तथा स्फूर्ति बढ़ाता है। दूध और सब प्रकारके मीठे फलोंमें भी चीनीका अंश मौजूद रहता है, जो गन्नेकी चीनीसे कहीं ज्यादा अच्छा और सुपाच्य हुआ करता है। चीनी तथा सब प्रकारके कार्बोज या माड़ीको पचानेके लिये विटामिन बी (B) का होना बहुत जरूरी है, किंतु गन्नेकी चीनी या मिश्रीमें किसी प्रकारका भी विटामिन नहीं पाया जाता। यही कारण है कि जो लोग अधिक मिठाई या चीनी खाया करते हैं उनका पाचन खराब हो जाया करता है और उन्हें अपच, मन्दाग्नि, अतिसार, पेचिस आदिकी शिकायतें पैदा हो जाती

हैं। कभी-कभी आँतोंको इससे इतनी गहरी हानि पहुँच जाती है कि सारा जीवन भारस्वरूप बन जाता है। अतः चीनी और मिठाईकी जगह यदि दूध, फल और मेवे खाये जायँ तो वे अधिक लाभदायक होंगे। अनाजोंका श्वेतसार भी वास्तवमें चीनी ही है और उनके द्वारा भी यह आवश्यकता बहुत अच्छी तरह पूरी हो जाती है। गन्नेकी चीनीसे ये सब चीजें ज्यादा अच्छी और सुपाच्य होती हैं, क्योंकि एक तो इनमें आवश्यक विटामिन मौजूद रहते हैं और दूसरे कुछ प्रोटीन, लवण तथा वसा आदि भी पाये जाते हैं। अतएव शरीरके लिये कार्बोजका भाग चीनीसे लेनेके बजाय उपर्युक्त चीजोंसे लेना ज्यादा उपयोगी है। शहद भी इस दृष्टिसे बड़ी ही उपयोगी चीज है; क्योंकि यह एक प्रकारसे पहलेसे ही पचा-पचाया हुआ भोजन है, और पेटमें पहुँचते ही सीधे खूनमें सोख लिया जाता है।

केशव—अच्छा, इसे तो समझ लिया। अब खनिज या लवणजातीय पदार्थ क्या हैं, उन्हें भी बता दीजिये।

पिता—ये कई प्रकारके क्षार हैं, जो प्रोटीनकी तरह हमारे शरीरकी बनावटमें काम आते हैं। दाँतों और हड्डियोंकी बनावटमें प्रायः दो तिहाई भाग इन्हीं क्षारोंका रहा करता है जिनमें चूनेका क्षार (Calcium) सर्वप्रधान है। शेष एक तिहाई भाग प्रोटीनका होता है। ये सब क्षार मुख्यतः हमें शाक-तरकारियोंसे तथा नमकसे प्राप्त होते हैं। साथ ही फल,

दूध और अनाज आदिमें भी इनकी बहुत कुछ मात्रा रहती है। अनाजोंमें क्षारका भाग अधिकतर उनके छिलकोंमें ही रहा करता है; किंतु ये छिलके मिलोंकी पिसाईमें निकालकर अलग कर दिये जाते हैं। गेहूँमें लोहा, फास्फरस, मेग्नीशियम और पोटेशियम नामक क्षार मौजूद रहते हैं, किंतु ये सब चोकरमें ही पाये जाते हैं, जिसे हमलोग छानकर आटेसे अलग कर दिया करते हैं। इस प्रकार हम गेहूँका एक बहुमूल्य अंश नित्य फेंक देते हैं। हमें चाहिये कि सदा चोकरसहित आटेकी रोटियाँ खाया करें। छने हुए आटेसे बेछना हुआ आटा कहीं ज्यादा पुष्टिकर और स्वास्थ्यदायक होता है।

दूधमें लोहे और ताँबेको छोड़कर प्रायः हर एक प्रकारके आवश्यक क्षार उचित मात्रामें मौजूद रहते हैं। और चूने (Calcium) का अंश तो उसमें प्रधान रूपसे पाया जाता है। अतएव बढ़ते हुए बच्चोंके लिये दूध एक अत्यन्त आवश्यक भोजन है, क्योंकि उनकी हड्डियोंके बनने और बढ़नेके लिये चूनेका अंश बहुत जरूरी है और यह दूधसे जितनी अच्छी तरह प्राप्त हो सकता है उतना किसी और चीजसे नहीं। एक सेर दूधमें करीब एक माशा चूना मौजूद रहता है। इसके अतिरिक्त शाक-तरकारियोंमें भी प्रायः सभी प्रकारके क्षार यथेष्ट मात्रामें मौजूद रहते हैं। विशेषकर हरे और पत्तीदार शाकमें ताँबे और लोहेका अंश मुख्य रूपसे

पाया जाता है। लोहेकी आवश्यकता हमारे खूनकी बनावटमें मुख्य रूपसे रहा करती है। खूनके लाल कण, जिनके कारण खूनका रंग लाल दिखायी देता है, मुख्यतः लोहेसे ही बनते हैं। ये लाल कण आक्सीजनको हमारे श्वासकी वायुसे खींचकर सम्पूर्ण शरीरके कोषाणुओं (Cells) में पहुँचाया करते हैं और कोषाणुके तमाम विकारोंको जलानेमें सहायता देते हैं। साथ ही भोजनका पचा हुआ रस भी, जो खूनमें पहुँचता है, इन्हीं लाल कणोंकी सहायतासे नित्य आक्सीजनद्वारा जलाया जाता है और इस प्रकार शरीरके अंदर गरमी, शक्ति और स्फूर्ति पैदा करनेका काम किया करता है। जिन लोगोंके भोजनमें लोहेका अंश पर्याप्त रूपसे नहीं रहता, उनके खूनमें लाल कणोंका बनना रुक जाता है और उन्हें खूनकी कमी या 'रक्ताल्पता' (Anaemia) का रोग आ घेरता है। ऐसे लोगोंको चाहिये कि अन्य पौष्टिक और हल्के भोजनके साथ-ही-साथ पालक, बथुआ आदि हरे और पत्तीदार शाकका सेवन भी आरम्भ कर दें। ताँबा भी लोहेको रक्तके निर्माणमें सहायता दिया करता है। बिना ताँबेकी सहायताके लोहा अनपचा-सा रहकर मलके साथ बाहर निकल जाता है और शरीरका कोई उपकार नहीं कर सकता।

केशव—अच्छा, अन्य प्रकारके लवणोंकी कमी-बेशीसे स्वास्थ्यपर क्या प्रभाव पड़ता है?

पिता—लवणोंकी कमी या अभावसे शरीरमें भाँति-भाँतिके रोग हो जाया करते हैं, जैसे देहमें खुजली, दाँत और हड्डियोंके रोग, खूनकी खराबी, अपच, मन्दाग्नि, वातरोग हृदयकी दुर्बलता, घेघा इत्यादि। ज्यादा लवण खानेसे भी सूजन आदि रोग पैदा हो जाते हैं। वास्तवमें शरीरके स्वास्थ्यके लिये सब प्रकारके लवणोंका परस्पर ठीक अनुपातमें मौजूद रहना बहुत जरूरी है। यदि इनके अनुपातमें कुछ भी कमी-बेशी हुई तो शरीर रोगी हो जायगा। बायोकेमिक (Biochemic) चिकित्साप्रणालीका निर्माण तो बस इसी एक सिद्धान्तको लेकर किया गया है। इस प्रणालीके डाक्टर लोग हर प्रकारके रोगके लिये बाहर मुख्य-मुख्य लवणोंमेंसे जब जिस लवणके अनुपातमें कमी जान पड़ती है, उस समय उसे ही खिलाकर रोगीको अच्छा कर दिया करते हैं।

केशव—लेकिन हमारे अंदर किसी लवणके अनुपातमें कमी-बेशी न होने पावे, इसके लिये क्या उपाय है?

पिता—विशेषज्ञोंने इसके लिये बतलाया है कि यदि हम अपने भोजनमें नित्य चोकरदार आटेकी रोटी और ताजी हरी तरकारियाँ एवं पत्तीदार शाक शामिल रक्खें तथा आध सेर दूध भी रोज पी लिया करें तो फिर किसी लवणके अनुपातमें कमी न पड़े। दाल और तरकारियोंमें जो नमक ऊपरसे डाला जाता है वह भी शरीरके लिये आवश्यक है। उससे खून सदा शुद्ध रहता है और नसोंमें पानीका दौरा ठीक

होता है; किंतु अधिक नमक खाना हानिकर है। मुख्यतः चावल खानेवालोंको तो नमक कम ही खाना चाहिये। साथ ही जिन लोगोंको किसी प्रकार गुर्देका रोग हो—जैसे पथरी, बहुमूत्र, गठिया इत्यादि तथा चर्मरोग हो उन्हें भी नमक खाना हानिकर होगा। शेष साधारण लोगोंके लिये रोज केवल एक चुटकी नमक काफी होता है।

केशव—लवणोंका हाल तो मालूम हो गया। अब छः प्रकारके विटामिन क्या होते हैं, उन्हें भी बतलाइये।

पिता—विटामिन, जैसा कि मैं उस दिन बतला चुका हूँ, एक प्रकारके प्राण-पोषक तत्त्व हैं, जिनके द्वारा शरीरके भिन्न-भिन्न भागोंको भोजनसे पोषण पहुँचता है। इनके अस्तित्वका पता अभी कुछ ही समय हुए, वैज्ञानिकोंको लगा है। तीस-पैंतीस वर्ष पहले इनके सम्बन्धमें कोई कुछ नहीं जानता था। उस समय लोगोंका यह खयाल था कि शारीरिक पोषणके लिये केवल प्रोटीन, वसा, कार्बोज तथा लवणजातीय पदार्थ ही आवश्यक होते हैं। अन्य किसी वस्तुकी आवश्यकता नहीं। निदान लगभग तीस वर्ष हुए कुछ वैज्ञानिकोंने इन चारों वस्तुओंको निश्चित मात्रामें अलगसे मिलाकर एक कृत्रिम भोजन तैयार किया और उसे चूहे, कबूतर आदि कुछ जानवरोंको खिलाकर देखा। शीघ्र ही ये जानवर बीमार हो गये और मरने लगे। किंतु ज्यों ही उन्हें स्वाभाविक भोजन दिया गया कि वे फिर चंगे

हो गये। इस प्रकार जब-जब उन्हें कृत्रिम भोजन दिया जाता तब-तब वे बीमार पड़ जाते और ज्यों ही स्वाभाविक भोजन दिया जाने लगता त्यों ही वे अच्छे हो जाते। अतएव सिद्ध हुआ कि स्वाभाविक भोजनमें उपर्युक्त चारों पदार्थोंके अतिरिक्त कुछ और ऐसी वस्तु या वस्तुएँ मौजूद हैं जो जीवधारियोंके शरीर और स्वास्थ्यके लिये आवश्यक हैं। अस्तु, लन्दनके एक डाक्टरने* इस वस्तुकी उपस्थिति गेहूँ आदि कई अनाजोंके चोकरमें तथा शाकमें प्रयोगोंद्वारा सिद्ध की और उसका नाम विटामिन (Vitamin) रक्खा। कुछ दिनों बाद एक दूसरे डाक्टरने† एक दूसरे प्रकारका ऐसा ही तत्त्व मक्खनमें सिद्ध किया और उसका नाम 'विटामिन ए' रक्खा। अनाजवाला तत्त्व अब 'विटामिन बी' के नामसे प्रसिद्ध हो गया। इस प्रकार नित्य नये-नये विटामिनोंकी खोज होने लगी और उनके नाम अंग्रेजी वर्णमालाके अक्षरोंपर 'विटामिन ए', 'विटामिन बी', 'विटामिन सी' आदि रक्खे जाने लगे। कुल मिलाकर अबतक छः प्रकारके विटामिनोंका पता लग चुका है। ये सब विटामिन खाद्य वस्तुओंसे शरीरके भिन्न-भिन्न अङ्गोंके लिये जरूरी तत्त्व खींचकर उनका पोषण किया करते हैं। इनके अभावमें वे अङ्ग रोगी और कमजोर हो जाते हैं। उदाहरणार्थ 'विटामिन

* Dr. Casimea Funk
† Dr. Y. E. Mccollum

ए' हमारे भोजनमेंसे जरूरी तत्त्वोंको खींचकर हमारे नेत्र, फेफड़ों और पाकाशयमें पहुँचाते हैं, जिससे उन-उन अङ्गोंकी पुष्टि होती है और उनका स्वास्थ्य ठीक रहता है। 'विटामिन ए' की अनुपस्थितिमें शरीरकी बाढ़ रुक जाती है और आँखोंमें एक विशेष प्रकारका रोग (Xerophthalmia) हो जाता है। 'विटामिन बी' की सहायतासे हमारा मस्तिष्क, हृदय, मांसपेशियाँ और आँतें मजबूत होती हैं और इसके अभावमें एक दूसरे प्रकारकी बीमारी हो जाती है जिसे 'बेरी-बेरी' (Beri-Beri) का रोग कहते हैं। इसी प्रकार 'विटामिन सी' हमारे रक्तको शुद्ध रखता है और इसके अभावमें 'स्कर्वी' (Scurvy) नामका रोग हो जाता है। 'विटामिन डी' हमारी हड्डियोंकी रचनामें सहायता करता है। और इसके अभावमें 'अस्थि-विकृति' (Rickets) का रोग हो जाता है; 'विटामिन ई' संतानोत्पादनकी शक्ति देता है और 'विटामिन जी' हमारी चमड़ीको नीरोग रखता है। इसके अभावमें 'पेल्लाग्रा' (Pellagra) नामका रोग पैदा हो जाता है। वैज्ञानिकोंका कहना है कि ये सभी प्रकारके विटामिन सूर्यके प्रकाशसे जन्म लेते हैं और वहींसे फल, अनाज तथा शाकोंमें पहुँच जाया करते हैं। प्रयागके डाक्टर नीलरत्न धरकी तो राय है कि एकमात्र 'विटामिन सी' को छोड़कर शेष सभी प्रकारके विटामिनोंकी कमी केवल सूर्यके प्रकाश अर्थात् घाम-सेवन करनेसे ही पूरी की जा सकती है।

केशव—किन-किन खाद्य वस्तुओंमें कौन-कौन-से विटामिन पाये जाते हैं ?

पिता—'विटामिन ए,' जैसा कि पहले कह चुके हैं, मुख्यतः मक्खनमें सबसे ज्यादा पाये जाते हैं। दूध और पत्तीदार शाकोंमें (जैसे पालक, करमकल्ला आदिमें) भी इनकी प्रचुर मात्रा पायी जाती है। 'विटामिन बी' गेहूँके चोकर, चावलके कने तथा पत्तीदार शाकोंमें सबसे ज्यादा मौजूद रहते हैं। 'विटामिन सी' अधिकतर संतरे, नींबू तथा नारंगीकी जातिवाले फलोंमें पाये जाते हैं। 'विटामिन डी' मक्खनमें 'विटामिन ए' के साथ-ही-साथ मौजूद रहते हैं। 'विटामिन ई' गेहूँ, हरी पत्तियों तथा बिनौले इत्यादि कुछ वनस्पति जातीय तेलोंमें मिलते हैं। संक्षेपसे इन तमाम विटामिनोंके बारेमें तीन मुख्य बातें याद रखना जरूरी है—

(१) प्रथम तो यह कि एक ही खाद्य-वस्तुमें सब प्रकारके विटामिन नहीं मिला करते, कुछमें विटामिन 'ए' और 'डी' मिलता है, तो कुछमें विटामिन 'बी,' 'सी' या 'जी' मिलता है। हाँ, दूधमें अवश्य प्रायः सभी प्रकारके विटामिन एक साथ पाये जाते हैं।

(२) शरीरके लिये विटामिनोंकी बहुत थोड़ी मात्रा आवश्यक हुआ करती है, किंतु होती है आवश्यकता सभी प्रकारके विटामिनोंकी।

(३) सब प्रकारके विटामिन प्रायः ताजी, हरी वस्तुओंमें और उनकी स्वाभाविक अवस्थामें ही पाये जाते हैं। वस्तुओंको उबालने, सुखाने, गरम करने या मसालोंके मेलसे रख छोड़नेमें बहुत-से विटामिन नष्ट हो जाया करते हैं। प्राचीन कालमें लोगोंका भोजन अत्यन्त सादा और स्वाभाविक ढंगका हुआ करता था। इसलिये मालूम न रहनेपर भी उस समय उनके शरीरको सब प्रकारके विटामिन प्राप्त होते रहते थे। किंतु जबसे हमारी ख़ूराकमें कृत्रिमता-की वृद्धि होने लगी, तभीसे उसमें सब प्रकारके विटामिनोंका भी अभाव होने लगा और भाँति-भाँतिके रोग हमारे शरीरमें घर करने लगे। पहले हमारे यहाँ इतनी घनी बस्तियाँ न थीं, खुले हुए देहातोंमें रहना था, जाँतेका पिसा आटा और हाथका कुटा चावल खाते थे, दूध, घी और मक्खन घरमें ही पैदा होता था, खेतोंसे नित्य ताजी तरकारियाँ आती थीं और ऋतुके तमाम ताजे फल भी हमें प्राप्त थे। मिठासके लिये गुड़ और शक्कर भी हमलोग घरका ही बना खाया करते थे; किंतु अब घने शहरोंके बीच तंग गलियोंमें रहना होता है, मिलोंका पिसा आटा, मशीनका कुटा चावल, कारखानेकी बनी सफेद चीनी, सालों-का रक्खा डिब्बोंका सुरक्षित फल, मक्खन और दूध तथा इनके साथ दूषित वनस्पति घी खानेको मिलता है। फिर यदि हमारे भोजनमें विटामिनोंका अकाल हो और हम भाँति-

भाँतिके रोगोंके शिकार बने रहें तो आश्चर्य ही क्या है। अस्तु, यदि अधिक झंझटमें न पड़कर अब भी हम अपना खान-पान पहलेकी ही तरह सादा और स्वाभाविक बनाये रहें तो फिर विटामिनोंके बारेमें अधिक चिन्ता करनेकी आवश्यकता नहीं।

केशव—अच्छा, भोजनके तमाम आवश्यक अंशोंको तो मैं समझ गया, परंतु अभी यह नहीं मालूम हुआ कि कौन-कौन-सा अंश कितनी मात्रामें हमारे लिये आवश्यक है और उसे प्राप्त करनेके लिये हमें नित्य क्या-क्या और कितना आहार करना चाहिये।

पिता—इसका निर्णय हर एक व्यक्तिके लिये उसकी आयु, डील-डौल, शारीरिक परिश्रम और ऋतु तथा देशके विचारसे अलग-अलग ही किया जा सकता है। तुम जानते हो कि भोजनका प्रोटीन नामक अंश शरीरको बनाने और बढ़ानेका काम करता है। अतएव जिन लोगोंका शरीर अभी बनने या बढ़नेकी अवस्थामें है उनके (अर्थात् शिशु, बालक और नवयुवकोंके) भोजनमें प्रोटीनकी मात्रा बड़े-बूढ़ोंके (जिनके शरीरको अब आगे नहीं बढ़ना है) भोजनसे ज्यादा होनी चाहिये। इसी प्रकार जो कसरती लोग हैं या जिन्हें शरीरसे कठिन परिश्रम करना पड़ता है, उनके भोजनमें बैठलुओंकी अपेक्षा कार्बोज (Carbo-hydrates) नामक अंशकी अधिक आवश्यकता रहती है; क्योंकि उनके शरीरमें

शक्तिका खर्च अधिक होता है और कार्बोजसे ही यह (मेहनत करनेकी) शक्ति उनके शरीरको मिल सकती है। देश और ऋतुका प्रभाव भी इस विषयमें कम महत्त्वपूर्ण नहीं होता। जिन देशोंमें सर्दी अधिक पड़ती है वहाँ शरीरकी गरमी ज्यादा तेजीके साथ निकलती रहती है। अतएव उसे कायम रखनेके लिये भोजनमें वसाजातीय पदार्थोंका ज्यादा होना जरूरी है। इसीलिये लैंपलैंड, ग्रीनलैंड आदि बर्फीले देशोंके निवासी वसाजातीय पदार्थ बड़े शौकसे खाया करते हैं। वहाँके बच्चे मोमबत्तियोंके टुकड़े ऐसे प्रेमसे खा जाते हैं, जैसे तुमलोग मिठाइयाँ खाते हो। एक बार एक ध्रुवप्रदेशके प्रसिद्ध यात्री सर जानफ्रैंकलिनने ग्रीनलैंडमें यह जानना चाहा कि वहाँके निवासी ज्यादा-से-ज्यादा कितनी चर्बी खा सकते हैं। अतएव उन्होंने अपनी संदूकसे कुछ मोमबत्तियाँ निकाल-कर एक एस्किमो (Eskimo) बालकको खिलाना आरम्भ किया। धीरे-धीरे करके पूरी सात सेर मोमबत्तियाँ उस बालकके पेटमें समा गयीं तब फ्रैंकलिन साहबको अपनी मोमबत्तियोंका स्टाक खतम हो जानेका भय पैदा हुआ और उन्होंने वह प्रयोग बंद कर दिया। इसी प्रकार एक यूरोपीय बंदरगाहपर भी उत्तरी रूसके कई मल्लाह सड़कके सरकारी लैम्पोंसे तेल पीते हुए पकड़े गये थे। मतलब यह कि भोजनमें चर्बीकी आवश्यकता गरम देशोंसे ठंडे देशोंमें अधिक रहा करती है। हमलोग भी यहाँ जाड़ेके दिनोंमें

बादाम, अखरोट, गाजरका हलुआ इत्यादि चिकनाईदार चीजें अधिक खाया करते हैं, किंतु गरमीके दिनोंमें नहीं। पृथ्वीके अनेक विद्वानोंने अनेक प्रकारके उपायोंसे यह जाननेकी चेष्टा की है कि मनुष्यके आहारमें किस चीजकी कितनी मात्रा होनी चाहिये और अपने-अपने मतानुसार उन्होंने अलग-अलग श्रेणीके मनुष्योंके लिये अलग-अलग भोजनकी तालिकाएँ भी बना डाली हैं। किंतु उनमें मतभेद बहुत अधिक है और सबसे ज्यादा मतभेद प्रोटीनकी मात्राके विषयमें दिखायी देता है। कुछ लोगोंका कहना है कि प्रोटीनका अंश भोजनमें सबसे ज्यादा होना चाहिये और कुछ इसके विरुद्ध हैं। आजकल अधिकतर विद्वानोंकी राय इसके विरुद्ध ही पक्षमें दिखायी देती है। अस्तु, इनकी राय-को ध्यानमें रखते हुए भोजनके भिन्न-भिन्न अंशोंकी मात्रा हर एक मनुष्यके लिये इस प्रकार आवश्यक जान पड़ती है—

कार्बोज	(carbo-hydrates	$\frac{4}{6}$ भाग।
वसाजातीय	...	$\frac{1}{6}$ भाग।
प्रोटीन तथा थोड़ा लवणजातीय अंश		$\frac{1}{6}$ भाग।
विटामिन छः	प्रकारके ...	न्यूनांशमें।

यह तालिका एक पूरी अवस्थाके मनुष्यके लिये है। बच्चों और बालकोंके भोजनमें कार्बोजकी मात्रा कुछ कम करके प्रोटीनकी मात्रा अधिक की जा सकती है; क्योंकि बच्चोंका

शरीर बढ़ता रहता है। इसके विपरीत वृद्धोंके लिये प्रोटीनकी मात्रा कम करके कार्बोजकी मात्रा बढ़ा देनी चाहिये।

केशव–परंतु इसके लिये हमें कौन-कौन-सा और कितना भोजन करना चाहिये ?

पिता–इस सम्बन्धमें एक संयुक्तप्रान्तीय विशेषज्ञने* हमारे भोजनकी जो सूची तैयार की है, वह हमारी उपर्युक्त तालिकाके बहुत कुछ अनुकूल बैठती है। उनके मतानुसार मानसिक परिश्रम करनेवाले स्वस्थ और पूर्णायु मनुष्यके लिये दिनभरके भोजनमें इस प्रकार सामग्री होनी चाहिये–

गेहूँका आटा ३ छटाक, चनेका आटा २ छटाक, दाल १ छटाक, दूध १२ छटाक, घी १½ छटाक, चीनी १ छटाक, शाक-तरकारी यथावश्यक। जोड़–२०½ छटाक।

इस प्रकारके भोजनसे हमें कार्बोजका अंश २६.६ तोला, वसा ८ तोला और प्रोटीन ६.७५ तोला प्राप्त हो सकता है। यदि हम इसमें ऋतुके ताजे फलोंको और जोड़ दें तो यह सूची हम भारतीयोंके लिये एक काफी अच्छी आहार-सूची कही जा सकती है। दुनियाके बहुत-से अन्यान्य विद्वानोंने भी अपने-अपने मतके अनुसार भाँति-भाँतिकी आहार-सूचियाँ बनायी हैं और उनमें बहुत कुछ मतभेद भी दिखायी देता है। किंतु हमें यहाँ उस बहसमें पड़नेकी

* डाक्टर त्रिलोकीनाथ वर्मा।

जरूरत नहीं और न इस प्रकारकी सूचियोंका हमारे साधारण दैनिक जीवनमें कुछ उपयोग ही है; क्योंकि कोई भी मनुष्य अपने भोजनको इस प्रकार रोज तौल-नापकर खाना न पसंद करेगा और न यह सदा उसके लिये सम्भव ही है। इस प्रकारकी तौल-नाप तो मुख्यतः उन स्थानोंमें उपयोगी होती है, जहाँ बहुत-से मनुष्योंको सामूहिक रूपसे खिलाने-पिलानेकी जरूरत पड़ती है। जैसे सेनामें सिपाहियोंके लिये बोर्डिंग-हाउसमें छात्रोंके लिये, गुरुकुल, अनाथालय और आश्रमोंमें वहाँके निवासियोंके लिये। साधारण व्यक्तिके लिये तो स्वाभाविक भूख ही उसके भोजनकी सबसे बढ़िया तौल-नाप है। यह भूख यदि वास्तवमें सच्ची भूख है तो, हमें ठीक उसी परिमाणमें लगा करती है, जिस परिमाणमें हमें भोजनकी जरूरत रहती है। उदाहरणार्थ—गरम देशोंकी अपेक्षा ठंडे देशोंमें हमें भोजनकी ज्यादा जरूरत रहती है, इसलिये वहाँ भूख हमें ज्यादा तेज लगती है। बैठलुओंकी अपेक्षा परिश्रमी लोगोंको भी भोजनकी ज्यादा जरूरत पड़ती है, अतएव उनकी भूख भी अधिक तेज रहती है। बच्चोंको बड़ोंकी अपेक्षा ज्यादा जल्दी-जल्दी भोजनकी जरूरत पड़ती है, अतएव उन्हें भूख जल्दी-जल्दी लगा करती है। अस्तु, साधारण दशामें हमारी भूख ही सब प्रकारकी वैज्ञानिक तौल-नापोंसे अच्छी और स्वाभाविक तौल-नाप कही जा सकती है और खाने-पीनेमें सदा इसीकी सलाह लेना कल्याणकर है। किंतु बहुत-से लोग झूठी भूखको

भी सच्ची भूख मान बैठते हैं और इसलिये हानि उठाया करते हैं। खान-पानकी खराबियोंसे बहुधा पेटमें एक प्रकारका खमीर या उफान उठा करता है, जिसमें मनुष्यको भूखका-सा कष्ट मालूम होने लगता है। किंतु यह एक झूठी भूख है और थोड़ी देरमें आप-से-आप शान्त हो जाया करती है अथवा यदि थोड़ा-सा पानी ही पी लिया जाय तो भी शान्त पड़ जाती है। ऐसी भूखको सच्ची मानकर यदि भोजन किया करें तो उससे अनेक प्रकारके रोग उठ खड़े होंगे। इसी प्रकार कुछ लोग रुचि या झूठी इच्छाको भी भूख समझ लेते हैं और फिर उससे हानि उठाते हैं। तरह-तरहके बढ़िया और स्वादिष्ट पदार्थोंको देखकर भूख न रहते हुए भी बहुधा खानेको मन चल आता है। किंतु यह हमारे चञ्चल मनकी माँग है, शरीरकी माँग नहीं। अतएव इसे दबाना और शरीरकी माँगको ही सच्ची भूख समझना उचित है। सच्ची भूख क्षणिक नहीं बल्कि स्थायी होती है। साथ ही वह हमें ज्यादा बेचैन भी नहीं किया करती। बल्कि उसमें चित्त एक प्रकारसे शान्त और प्रसन्न रहता है तथा देह हल्की जान पड़ती है। सच्ची भूखमें रूखा-सूखा भोजन भी अमृत-जैसा स्वादिष्ट लगता है और ऐसी ही भूखके लिये कहावत प्रसिद्ध है कि—

भूख भर खाय नींद भर सोवै।
उसका रोग दूर जा रोवै॥

अस्तु, सब प्रकारकी झूठी भूख और इच्छाओंको दबाकर सच्ची भूखको ही अपनी पथ-प्रदर्शिका बनाना

आवश्यक है। साथ ही कुछ थोड़ी-सी और भी ऐसी बातें हैं, जिन्हें भोजनके समय ध्यानमें रखना चाहिये।

केशव—वे क्या हैं?

पिता—संक्षेपमें वे इस प्रकार हैं—

(१) भोजनपर बैठनेके पहले शरीर और मनको सब प्रकारसे स्वच्छ और पवित्र कर लो। हाथ-पैर अच्छी तरह धो डालो और यदि स्नानका समय हो तो अवश्य नहा भी लो। चिन्ता और क्रोध पैदा करनेवाली सब बातोंको अलग रखकर केवल पवित्र और मनको प्रसन्न करनेवाली बातोंकी ही चर्चा छेड़ो; क्योंकि मनका पाचनक्रियापर बहुत अधिक प्रभाव पड़ता है।

(२) भोजनके समय वस्त्र साफ, पवित्र, ढीले और हल्के होने चाहिये। कोट, पतलून आदि पहनकर खाना ठीक नहीं; क्योंकि इनसे शरीर जकड़ा रहता है और पाचनेन्द्रियोंके काममें बाधा पहुँचती है।

(३) हर एक कौरको स्वाद ले-लेकर और खूब चबा-चबाकर खाना उचित है। जबतक जीभको स्वाद मिलता रहे तबतक कौरको चबाते ही रहना चाहिये और जब वह मुखकी लारसे मिलकर बिल्कुल पतला पड़ जाय तभी उसे निगलना चाहिये। अमेरिकाके होरेस फ्लेक्चर नामक एक मनुष्यने तो चबाकर खानेकी इस क्रियाको कलाके स्थानतक पहुँचा दिया था और इसके द्वारा उसने पाचनसम्बन्धी कितने ही प्रकारके रोगोंको जड़से अच्छा कर दिया था। उसकी

यह विधि अबतक 'फ्लेचरिज्म' के नामसे पुकारी जाती है।

(४) भोजनकी चीजोंमें सफाई और पवित्रताका पूरा-पूरा ध्यान रखना चाहिये। बाजारू खोमचेवाले और दूकानदार लोग जो चीजें तैयार करते हैं, वे प्रायः बहुत गंदे ढंगसे बनाते हैं और उनसे भाँति-भाँतिके रोग फैला करते हैं। अतएव बाजारू चीजें न खाकर सदा घरकी ही बनी चीजें खानी चाहिये।

(५) नित्य सादा और स्वाभाविक ही भोजन करना चाहिये। मांस, अण्डे, शराब आदि कभी नहीं खाने-पीने चाहिये। ज्यादा खटाई, मिर्च और मसालोंके मेलमें भोजनके स्वादको बदलना अच्छा नहीं, क्योंकि एक तो इससे भोजनके बहुत-से विटामिन नष्ट हो जाते हैं और उसकी उपयोगिता जाती रहती है; दूसरे पाचनेन्द्रियाँ भी मिर्च-मसालोंकी तेजीसे उत्तेजित होकर शिथिल पड़ जाया करती हैं और उनकी पाचनशक्ति कम हो जाती है। अचार भी अच्छी चीज नहीं है, उससे भी स्वास्थ्यपर बहुत बुरा प्रभाव पड़ता है।

(६) बासी या बिगड़ा हुआ भोजन भी करना अच्छा नहीं है। ऐसा भोजन तामसी कहलाता है, और शरीरमें आलस्य उत्पन्न करके बुद्धिको क्षीण करता है।

(७) भोजनमें यथासम्भव हरे शाक और ताजे फलोंकी मात्रा पर्याप्त रूपसे रहनी चाहिये। साथ ही भोजनकी चीजोंमें सदैव कुछ-न-कुछ परिवर्तन करते रहना भी रुचि और स्वास्थ्यको बढ़ानेवाला है।

(८) भोजनके लिये समय बाँधना और नित्य नियत समयपर ही भोजन करना बहुत आवश्यक है*। इससे बँधे हुए समयपर भूख लगती है और पाचनक्रिया ठीक रहती है। इस देशकी जल-वायुको देखते हुए पूरी आयुवाले हम भारतीयोंके लिये दिनमें केवल दो बार भोजन करना ठीक समझ पड़ता है†। बालकोंको अवश्य चार बार खाना उचित है। किंतु हम देखते हैं कि बहुत-से बालक ऐसे होते हैं। जो हर समय अपना मुँह बकरीकी तरह चलाया करते हैं। उनके जेब मूँगफली, मेवे, बिस्कुट या चनोंसे भरे रहते हैं। और वे रास्तेमें भी उसे खाते चलते हैं। यह आदत स्वास्थ्यकी दृष्टिसे बहुत बुरी है। एक बारका खाया हुआ अन्न कम-से-कम पाँच या छः घंटेमें पचा करता है। अतएव इतने समयका अन्तर भोजनमें अवश्य रखना चाहिये।

(९) भोजन सदैव कुछ हल्के ही पेट करना चाहिये। खूब तनकर खानेकी आदत बड़ी हानिकारी होती है। इससे पेट और आँतोंपर बहुत तनाव पड़ता है और पचानेके काममें बाधा उपस्थित होती है। कभी-कभी

---

* 'कालभोजनमारोग्यकारणम्' (आत्रेय मुनि)

अर्थात् 'नियत समयका भोजन आरोग्यका कारण है।'

† सायंप्रातर्मनुष्याणामशनं श्रुतिबोधितम्।
नान्तरा भोजनं कुर्यादग्निहोत्रसमो विधिः॥
(चरक)

अर्थात् 'अग्निहोत्रके समान मनुष्योंको संध्या और सबेरे नित्य दो बार भोजन करनेका विधान है। इसके बीचमें खाना ठीक नहीं।'

अधपचा भोजन पेटमें पड़ा-पड़ा सड़ने भी लग जाता है और तब वह रक्तको दूषित करके भाँति-भाँतिके उपद्रव पैदा करता है; किंतु कुछ लोगोंकी आदत होती है कि स्वादके लोभमें पड़कर अपनेको सम्हाल नहीं सकते और बेहद खा जाया करते हैं। अन्तमें जब पेट फूलने लगता है तब चूरनकी गोलियाँ ढूँढ़ते फिरते हैं । ऐसे आदमियोंकी तुलना कुछ विद्वानों-ने पशुओंके साथ की है।* महात्मा गाँधीकी भी राय है कि 'यदि हम आवश्यकतासे अधिक खाते हैं तो वह चोरीका खाते हैं। जितना हम स्वादके लिये खाते हैं वह कच्चे पारेकी भाँति किसी-न-किसी रूपमें फूट निकलता है। हम उतने ही दुखी हो जाते हैं। हमारा स्वास्थ्य उतना ही बिगड़ जाता है।' अस्तु, मिताहारकी ओर हमारा ध्यान सदैव रहना चाहिये। पेट हल्का होता है तो सारा शरीर हल्का रहता है और तबीअत हल्की रहती है। इसीलिये हमारे वैद्यक ग्रन्थमें लिखा है कि 'पेटके केवल दो कोने भोजनसे भरने चाहिये और तीसरा जलसे। किंतु चौथा कोना सदैव हवाके चलने-फिरनेके लिये खाली छोड़ देना चाहिये।'†

(१०) भोजनके उपरान्त थोड़ा लेटना, बैठना या आराम करना चाहिये, दौड़ना-धूपना या मेहनतके काम करना उचित नहीं।

---

* अनात्मवन्तः पशुवद् भुञ्जते येऽप्रमाणतः।
रोगानीकस्य ते मूलमजीर्णं प्राप्नुवन्ति हि ॥—माधवाचार्य

† कुक्षेर्भागद्वयं भोज्यैस्तृतीये वारि पूरयेत्।
वायोः संचारणार्थाय चतुर्थमवशेषयेत् ॥—भावप्रकाश

(११) महीनेमें एक या दो बार एकादशी या पूर्णिमाके दिन उपवास भी जरूर करना चाहिये। इससे पाचनेन्द्रियोंको आराम मिलता है और वे पहलेसे अधिक सबल हो जाती हैं। साथ ही भोजनसम्बन्धी जो कुछ भूलें हम किया करते हैं वे भी इस समय बहुत कुछ ठीक हो जाती हैं। हमारी जठराग्नि बढ़ जाती है और पाचनकी क्रिया तेज हो जाती है। साथ ही इससे हममें आत्मिक शक्ति भी प्रबल हो जाती है और विचार शुद्ध एवं बुद्धि पवित्र बन जाती है। लेकिन क्षीण और दुर्बल शरीरवालोंको हम उपवासकी राय नहीं दे सकते।

इस प्रकार ये ग्यारह शिक्षाएँ भोजनके सम्बन्धमें सदा याद रखनेकी हैं।

केशव—भोजनके साथ धर्मका भी कोई सम्बन्ध है ?

पिता—हम हिंदुओंमें तो प्रत्येक कामके साथ धर्मका सम्बन्ध है। भोजनसे तो शरीर और मन बनता है जो धर्मसाधनके प्रधान हेतु हैं; फिर भोजनसे धर्मका सम्बन्ध कैसे न होता ? भोजन एक प्रकारका यज्ञ है जो मनुष्यके अंदर विराजमान भगवान्‌की तृप्तिके लिये किया जाता है। यज्ञमें पवित्र वस्तु ही काममें आती है। इससे भोजनमें भी वही वस्तु काममें लेनी चाहिये जो पवित्र हो—उदाहरणार्थ जो चीजें स्वभावसे पवित्र और सात्त्विक हों जैसे दूध, घी, मक्खन, फल, शाक आदि; जिनमें सङ्ग-दोषसे, किसी अपवित्र वस्तु, स्थान, बरतन या व्यक्तिके संयोगसे अपवित्रता

न आ गयी हो; जो अन्याय और अधर्मसे पैदा किये हुए, दूसरेके हककी मारकर लाये हुए धनके कारण अपवित्र न हो। एक बात और है—भोजन केवल अपने ही लिये नहीं बनाना-खाना चाहिये। अपने खानेसे पहले अतिथि-अभ्यागत, देवता, ऋषि तथा दूसरे-दूसरे जीवोंके लिये यथासाध्य हिस्सा निकालकर तब खाना चाहिये। भोजन शुरू करते समय अन्नको भगवत्-स्वरूप पवित्र मानकर प्रणाम करना चाहिये और प्रत्येक कौरके साथ ऐसी धारणा करनी चाहिये कि इसके द्वारा मैं पवित्र, बलसम्पन्न, शुद्धबुद्धिसम्पन्न और पुष्ट हो रहा हूँ। भोजन करते समय असद्विचार या असत् बातचीत नहीं करनी चाहिये। शुद्ध होकर जमीनपर बैठकर भोजन करना चाहिये।

आहार-शास्त्र एक बहुत बड़ा शास्त्र है और इसकी सब बातें बतलानेमें एक भारी ग्रन्थ तैयार हो जायगा। इसलिये यहाँ संक्षेपमें हमने केवल इसकी मुख्य-मुख्य बातें ही बतला दी हैं। आगे चलकर जब तुम बड़े होओगे तब इस सम्बन्धमें स्वयं पढ़कर सब बातें जान सकोगे। परंतु जो बातें हमने ऊपर बतला दी हैं उन्हें यदि ध्यानमें रक्खोगे और अपने व्यवहारमें लाते रहोगे तो हमारा विश्वास है कि बहुत-से नित्यप्रतिके दोषों और रोगोंसे अपनेको बचा सकोगे।

केशव—मैं अवश्य इनपर ध्यान रक्खूँगा।

पानी

केशव—पिताजी ! उस दिन आपने भोजनके सब अंशोंको तो बतलाया, परंतु पानीके विषयमें कुछ नहीं कहा। पानी भी तो एक जरूरी चीज है।

पिता—हाँ, भोजनसे ज्यादा। परंतु उस दिन समय बहुत हो गया था, इसलिये नहीं बतलाया था। अब आज यदि सुनना चाहो तो बतला सकता हूँ।

केशव—जी हाँ, अवश्य सुनूँगा। बतलाइये।

पिता—अच्छा, सुनो। हमारे शरीरका प्रायः तीन चौथाई भाग पानीसे ही बना है। शरीरके एक-एक अङ्ग और हर एक अङ्गके एक-एक कोषाणुमें अधिकतर भाग पानीका ही दिखायी देता है। खूनमें भी अधिकांश पानी ही है और इसीसे वह तरल है तथा रगोंके भीतर चल-फिर सकता है। हमारी भीतरी सफाई भी पानीसे ही होती रहती

है और बहुत-सा गंदा पानी हमारे भीतरकी गंदगीको धोकर नित्य अपने साथ शरीरसे बाहर निकालता रहता है। इस प्रकार मल-मूत्र, थूक, पसीना और श्वासकी वायुके साथ लगभग २॥ या ३ सेर पानी रोज शरीरसे निकल जाया करता है। अतएव उसकी पूर्तिके लिये हमें दिनमें कई बार जल पीनेकी आवश्यकता पड़ती है। बहुत-सा जल हमारे खानेकी चीजोंमें भी मौजूद रहता है, जिनमेंसे दूध और फलोंमें पानीका हिस्सा सबसे ज्यादा होता है। इनके अतिरिक्त दाल, भात, रोटी, पूड़ी, तरकारी आदिमें भी जलका बहुत कुछ मेल मौजूद रहता है। जलकी सहायतासे हमारे भोजनका उपयोगी भाग खूनके रूपमें बदल जाता है और बिना जलके अच्छा-से-अच्छा भोजन भी बेकार हो जाता है। भोजन यदि किसी समय न भी मिले तो हम केवल पानीकी सहायतासे कई सप्ताह जीवित रह सकते हैं; किंतु यदि पानी न मिले तो दो-चार दिन भी जीना हमारे लिये असम्भव हो जायगा। अस्तु, तुम देखते हो कि पानी हमारे जीवनके लिये कितनी आवश्यक और उपयोगी वस्तु है; किंतु यह सब उपयोगिता केवल शुद्ध और साफ पानीमें ही है। अशुद्ध और खराब पानी तो हमारे लिये कभी-कभी विषसे भी ज्यादा भयंकर हो जाता है।

केशव—अशुद्ध और खराब पानीसे बीमारियाँ पैदा होती हैं ?

पिता—हाँ, पचीसों तरहकी बीमारियाँ पैदा होती और नित्य लाखों मनुष्योंके प्राण लिया करती हैं। उदाहरणके तौरपर टायफायड बुखार, हैजा, पेटमें कीड़े, आँव, अतिसार, फोड़ा, फुंसी, दाद, जलोदर इत्यादि सब रोग जलकी अशुद्धतासे ही पैदा होते हैं और हजारों, लाखों आदमी नित्य इनके शिकार होते रहते हैं।

केशव—अच्छा, तो शुद्ध और अशुद्ध जलकी पहचान क्या है?

पिता—शुद्ध जल वह है जो ऊपरसे नीचेतक बिल्कुल स्वच्छ, निर्मल और पारदर्शी हो, जिसमें न कोई रंग हो, न कोई गन्ध हो और न कोई स्वाद हो। भपकेसे उतारा हुआ पानी (Distilled water) बिल्कुल शुद्ध हुआ करता है और उसमें ये सभी गुण मौजूद रहते हैं। जिस पानीमें ये गुण न हों, उसे अशुद्ध समझना चाहिये। वर्षाका पानी भी आरम्भमें बिल्कुल शुद्ध होता है, किंतु जिस समय वह नीचे आता है तो उसमें हवाकी बहुत-सी अशुद्धियाँ मिल जाया करती हैं और वह उसी मात्रामें अशुद्ध हो जाता है।

केशव—जो पानी हमलोग रोज पिया करते हैं, वह कैसा होता है?

पिता—साधारण तौरपर हमारे पीनेका पानी इन छः किस्मोंके पानीमेंसे किसी-न-किसी प्रकारका हुआ करता है—

(१) वर्षाका जल (Rain water) ।

(२) तालाव या पोखरोंका जल (Surface water) ।

(३) कुएँ या वावली आदिका जल (Sub-soil water)

(४) झरनोंका जल ।

(५) नदीका जल (Current water)

(६) अत्यन्त गहरे कुओंका जल ।

इनमेंसे वरसातका ताजा जल यद्यपि नीचे आनेमें उतना शुद्ध तो नहीं रह जाता जितना वह ऊपर रहा करता है, फिर भी पीनेयोग्य जलके सभी गुण उसमें मौजूद रहते हैं। लेकिन कठिनाई यह है कि यह जल हर समय नहीं मिल सकता। तालाव या पोखरेका जल भी वास्तवमें वर्षाका ही जल है, जो वरसातके दिनोंमें चारों ओरसे वह-वहकर किसी गड्ढेमें जमा हो जाया करता है। यह जल वँधा हुआ होता है अर्थात् वहता नहीं, इसलिये वँधे हुए जलके तमाम अवगुण भी इसमें मौजूद रहते हैं। इसके अतिरिक्त हमारी गंदी आदतोंसे भी यह जल वहुत गंदा वन जाया करता है। उदाहरणके तौरपर हमारे देहातोंमें जिन तालावोंका जल पीनेके काममें लाया जाता है, उन्हींमें लोग कपड़े धोते हैं, दातुन-कुल्ला करते हैं, नहाते हैं और मल-मूत्रतक त्यागते हैं या धोते हैं। फिर भला, यदि ऐसा पानी तमाम रोगोंका घर न वन जाय तो आश्चर्य ही है। कितने तालाव चारों

ओर पेड़ोंसे इतने अधिक घिरे रहते हैं कि उनके ऊपर धूप आ ही नहीं सकती और इस प्रकार जलकी शुद्धिका जो एक सबसे बड़ा साधन है, वह वहाँसे दूर रखा जाता है। इसके अतिरिक्त ऐसे तालाबमें पेड़ोंके पत्ते भी नित्य पानीमें गिर-गिरकर सड़ा करते हैं तथा अनेक प्रकारके जीव-जन्तु और कीड़े-मकोड़े भी उसमें मरते और सड़ते रहते हैं, जिससे वहाँ-का पानी सब प्रकारकी गंदगीसे भर जाता है। कुएँ और बावली आदिका जल भी हमारी लापरवाही और भूलोंके कारण अत्यन्त खराब हो जाता है। तालाबकी तरह यहाँ भी लोग नहाते-धोते और कपड़े पछाड़ते हैं, जिससे तमाम गंदा पानी बहकर कुएँमें पहुँचता है और कुल पानीको खराब कर देता है। इसके अतिरिक्त कुएँके जलमें बहुत-से रासायनिक पदार्थ भी घुले रहते हैं, जिनमेंसे कुछ तो हमारे स्वास्थ्यके लिये लाभदायक होते हैं और कुछ हानिकारी। झरनोंके जलमें भी अनेक प्रकारकी लवणादिक घुलनेवाली चीजें मिली रहती हैं। साथ ही कहीं-कहीं झरनोंके जलमें अभ्रककी नन्ही-नन्ही किरचें भी मौजूद रहती हैं, जो आँतोंमें घाव पैदा कर देती हैं। अतएव इस जलको अधिक मात्रामें पीनेसे आँव, अतिसार, संग्रहणी आदि रोग हो जाया करते हैं। नदीके जलमें भी अनेक प्रकारके लवणादि द्रव्य घुले या मिले रहते हैं। किंतु ज्यादातर देखा यह जाता है कि नदीका जल किसीको कोई हानि नहीं पहुँचाता। इसका

कारण कदाचित् यह है कि नदीका जल हर समय बहता ही रहता है और इसलिये कोई स्थानीय वस्तु उसमें सड़ने नहीं पाती। फिर भी धाराके साथ बहुत-सी मैल-मिट्टी और दूसरी चीजें भी पानीमें बहती रहती हैं, अतएव पीनेके पहले नदीके जलको थोड़ी देर रखकर थिरा जरूर लेना चाहिये। संसारभरमें गङ्गाजीका जल सबसे उत्तम और पवित्र है और इसीलिये गङ्गाजीका नाम हमारे यहाँ घर-घरमें अत्यन्त श्रद्धा और भक्तिके साथ लिया जाता है। वैज्ञानिक प्रयोगोंके द्वारा भी गङ्गाजलकी पवित्रता और उपयोगिता कई बार सिद्ध की जा चुकी है। फिर भी बरसातके दिनोंमें बाढ़ इत्यादिके कारण सभी नदियोंका जल अत्यन्त मैला और खराब हो जाया करता है। अतएव ऐसी दशामें यह जल बिना साफ किये नहीं पीना चाहिये।

केशव—जलमें खराबियाँ कौन-कौन-सी रहा करती हैं?

पिता—जलमें मुख्यरूपसे तीन प्रकारकी अशुद्धियाँ पायी जाती हैं—

(१) *निर्जीव वस्तुएँ*—ये भी प्रायः तीन विभागोंमें बाँटी जा सकती हैं। यथा—(क) बालू, मिट्टी, कीचड़ इत्यादि—जो शरीरके लिये विशेष हानिकर नहीं है। (ख) भाँति-भाँतिके रासायनिक द्रव्य एवं खनिज पदार्थ, जैसे कई प्रकारके लवण और क्षार इत्यादि। ये क्षार थोड़ी मात्रामें शरीरके लिये लाभदायक होते परंतु अधिक

होनेसे आँतोंको हानि पहुँचाते हैं। यदि ये कणोंके रूपमें हुए तो आँतोंमें रगड़ पैदा करके घाव कर देते हैं। साथ ही ये गुर्देको भी हानि पहुँचाते हैं। पहाड़ी जलोंमें चूनेकी प्रायः अधिकता रहा करती है, जो पाचनके लिये हानिकारक है। (ग) मरे हुए जानवर और कीड़े-मकोड़े, जो पानीमें पड़े-पड़े सड़ा करते हैं तथा मल-मूत्र इत्यादि। ये चीजें शरीर और स्वास्थ्यके लिये अत्यन्त हानिकारक हैं। कल-कारखानों-की परित्यक्त चीजें भी इसी विभागमें रक्खी जा सकती हैं और स्वास्थ्यके लिये भयंकर रूपसे हानिकारी हैं।

(२) *सजीव वस्तुएँ*—इन्हें भी तीन विभागोंमें रक्खा जा सकता है। यथा—(क) जलके घास-पात एवं पौधे, जो शरीरके लिये अपकारी हैं। (ख) वनस्पति-जातिके बैक्टीरिया (Bactria) एवं अन्य छोटे-छोटे जीवाणु जो स्वास्थ्यके लिये अत्यन्त हानिकारी हैं। (ग) भाँति-भाँतिके जल-जन्तुओंके अंडे। ये भी बहुत हानिकारक हैं।

(३) *भाँति-भाँतिके रोगाणु*—इनमेंसे टायफायड एवं हैजेके कीटाणु अत्यन्त भयंकर हैं। इनके कारण हर साल बहुत-सी मृत्यु हुआ करती है।

केशव—क्या जलकी अशुद्धताको दूर करनेका भी कोई उपाय है?

पिता—हाँ, कई उपाय हैं—

(१) पहला और सबसे सीधा उपाय तो यह है कि

पानीको किसी साफ धुले हुए कपड़ेसे छानकर दस मिनटतक खौला ले। इससे बालू, मिट्टी आदि छाननेमें बहुत कुछ दूर हो जाती हैं और खौलानेसे चूना नीचे जम जाता है। तथा रोगोंके कीटाणु मर जाते हैं।

(२) दूसरी विधि फिल्टरकी है। इसके लिये लकड़ीका एक ढाँचा होता है, जिसमें तीन घड़े एक-दूसरेके ऊपर लगभग एक-एक बालिश्तके अन्तरपर रख दिये जाते हैं। इनमेंसे बीचेवाले घड़ेमें नीचेके आधे भागमें बालू और ऊपरके आधे भागमें कोयला भर दिया जाता है। शेष दोनों घड़े खाली रहते हैं। अब ऊपरके दोनों घड़ोंमें पेंदीकी ओर छेद कर दिया जाता है और उस छेदमें कपड़ेकी एक-एक बत्ती भी लगा दी जाती है, जिससे पानी टपक सके। सबसे नीचेवाले घड़ेके मुँहपर एक साफ मोटा कपड़ा बाँध दिया जाता है। बस, फिर जिस पानीको साफ करना होता है, उसे सबसे ऊपरवाले घड़ेमें भर देते हैं। यह पानी पेंदीसे टपक-टपककर बीचके घड़ेमें गिरेगा और फिर कोयले तथा बालूमेंसे छनता हुआ नीचेके घड़ेमें जायगा। इस तरह छाननेसे पानीमें मिले हुए तमाम दूषित पदार्थ और मैल-मिट्टी कोयले तथा बालूमें रह जाती है और पानी बिल्कुल साफ होकर नीचेवाले घड़ेमें भर जाता है। लेकिन इस विधिसे पानीमें घुले हुए पदार्थ अलग नहीं किये जा सकते और न रोगके कीटाणुओंसे ही बचाव हो सकता है।

(३) तीसरी विधि पानीको भपकेसे उतारनेकी है इसमें पानीको एक वर्तनमें उवालते हैं और उसकी भाप दूसरे वर्तनमें नलीद्वारा ले जाकर ठंडी कर लेते हैं, जिससे उस भापका फिर पानी वन जाता है। इस प्रकारका पानी विल्कुल शुद्ध होता है और दवाके काममें लाया जाता है। अंगरेजी दवाखानोंमें इस प्रकार शुद्ध किया हुआ पानी (Distilled water) विका भी करता है।

(४) हवा और घाम लगनेसे भी जल काफी शुद्ध हो जाता है। प्रयागके प्रसिद्ध वैज्ञानिक डाक्टर नीलरत्नधर-की तो राय है कि पानीको खुली धूपमें कई घंटेतक रख छोड़नेसे वह इतना शुद्ध हो जाता है कि उससे शरीरके घावतक धोये जा सकते हैं।

(५) रोगके कीटाणुओंको नष्ट करनेके लिये थोड़ा-सा परमेंगनेट पोटास नामक गुलावी दवा भी पानीमें मिला देनेसे काम चल सकता है। तुमने देखा होगा कि वीमारी-के दिनोंमें शहरकी म्युनिसिपैलिटियाँ तमाम कुओंमें यह गुलावी दवा छोड़वा दिया करती हैं।

(६) कुछ लोग पानीको उवालकर उसमें कपूर छोड़ लेते हैं। यह भी एक अच्छी विधि है।

इस प्रकार पानीको शुद्ध करनेकी कई विधियाँ हैं; किंतु साधारण मनुष्यके नित्यप्रतिके व्यवहारके लिये वही विधि सवसे उत्तम है, जिसकी चर्चा हम सवसे पहले कर आये

हैं। यदि रोज नहीं तो जिन दिनों आसपासमें हैजा, टायफायड आदि रोग फैल रहे हों, उतने समयके लिये तो अवश्य ही इस विधिको काममें लाना चाहिये और पानीको सदा उबालकर तथा छानकर पीना चाहिये।

केशव—अच्छा पानी पीनेके सम्बन्धमें भी कोई नियम है?

पिता—कोई खास नियम नहीं। जिस प्रकार भोजनके लिये सच्ची भूखको पथप्रदर्शक समझना उचित है, उसी प्रकार पानीके लिये भी अपनी प्यासको पथप्रदर्शक मानना उचित होगा। कुछ लोग भोजनके समय पानी बिल्कुल ही नहीं पीते और प्यासको दबाये रहते हैं। कुछ ऐसे हैं, जो भोजनके समय लोटों पानी गलेके नीचे उँडेल लिया करते हैं। ये दोनों ही आदतें अच्छी नहीं हैं। उचित यह है कि प्यासके अनुसार भोजनके बीच-बीचमें एवं बादमें भी थोड़ा-थोड़ा पानी पिया जाय। हमारे शरीरको पानीकी कब और कितनी आवश्यकता है, इसे बतलानेके लिये हमारी प्यास ही सबसे उत्तम और स्वाभाविक साधन है। अतएव इसीकी आज्ञाको मानना सदैव उचित है। साधारण अवस्थामें नित्य शीतल ही जल पीना लाभकारी हुआ करता है; क्योंकि शीतल जलके स्पर्शसे खूनका दौरा तेज हो जाया करता है। ठंडा जल पेटमें पहुँचते ही शरीरका बहुत-सा खून पेटकी ओर दौड़ने लगता है। इससे पाचनके कार्यमें सहायता मिलती है। स्नानके लिये भी ठंडा जल ही सर्वोत्तम है।

केशव—क्या जाड़ेके दिनोंमें भी ठंडे जलसे नहाना उचित है ?

पिता—हाँ, साधारणतः हर एक नीरोग मनुष्यको ठंडे जलसे नित्य ही नहानेकी आदत डालनी चाहिये। एक बार यह आदत पड़ जानेपर फिर सर्दी या जुकामका कोई डर नहीं रह जाता और हर प्रकारसे हानिके बजाय लाभ-ही-लाभ दिखायी देता है। वैज्ञानिकोंका कहना है कि ठंडा जल शरीरके लिये अत्यन्त बलदायक है। इसके स्पर्शसे त्वचाके तमाम कोषाणु सिकुड़ने लगते हैं, जिससे वहाँका रक्त अंदरकी रक्तनालियोंमें फेंक दिया जाता है। परंतु अंदर जाते ही वह रक्त गरम होकर फिर त्वचाकी ओर दौड़ने लगता है और अब उसकी गति पहलेसे भी अधिक तेज हो जाती है, जिससे त्वचामें फिर गरमी आ जाती है। तुमने देखा होगा कि ठंडे जलसे नहानेके बाद ही शरीर फिर गरम हो जाता है। इसका कारण वही है जो हम अभी बतला चुके हैं। अस्तु, नहानेके लिये हमें सर्वदा ठंडे जलका ही उपयोग करना चाहिये। इसके अतिरिक्त नहानेके सम्बन्धमें कुछ और भी नियम हैं जिन्हें ध्यानमें रखना चाहिये।

केशव—वे क्या हैं ?

पिता—वे नियम इस प्रकार हैं—

(१) शरीरकी गरमीसे जल कुछ थोड़ा ही अधिक ठंडा लेना चाहिये। जबतक शरीर बहुत मजबूत न हो, तबतक

जल बहुत ज्यादा ठंडा नहीं लेना चाहिये। मतलब यह है कि पानी उतना ही ठंडा हो, जितना शरीर सह सके और उसकी गरमी नहानेके बाद ही फिर लौट आये। जिस जलसे शरीर काँपने लगे और नीला पड़ जाय, ऐसा ठंडा जल कदापि न लेना चाहिये।

(२) नहानेके समय सबसे पहले पानी सिरपर छोड़े और बादमें दूसरे अङ्गोंको भिगोये।

(३) नहाते समय एक साफ तौलिया या मोटे गाढ़ेका कपड़ा पानीमें भिगो ले और उससे शरीरके एक-एक हिस्सेको इस प्रकार रगड़े और धोये कि उस स्थानपर लाली दौड़ आये।

(४) नहानेके बाद शरीरको किसी सूखे तौलियेसे इसी प्रकार खूब कसकर पोंछना भी चाहिये।

(५) भोजनके बाद तुरंत ही नहाना मना है। इससे मन्दाग्नि आदि रोग खड़े हो जाते हैं।

(६) यदि हवा तेज और ठंडी हो तो किसी बंद स्थानमें नहाना चाहिये।

इन छः नियमोंको नहानेके लिये ध्यानमें रक्खे तो सर्दी-जुकामका कोई भी डर नहीं रह सकता।

केशव—समझ गया और इन्हें ध्यानमें रक्खूँगा।

स्वच्छ वायुसेवन

पिता—बेटा केशव ! क्या तुम बतला सकते हो कि हमारे जीनेके लिये सबसे जरूरी चीज क्या है ?

केशव—जी हाँ, जीवनके लिये सबसे जरूरी चीज भोजन है; क्योंकि यदि भोजन न हो तो कोई भी प्राणी जीवित नहीं रह सकता।

पिता—हाँ, भोजन जीवनके लिये अवश्य एक बहुत जरूरी चीज है, किंतु फिर भी पानीकी जरूरत तो भोजनसे ज्यादा है; क्योंकि भोजनके विना आदमी तीन-तीन महीने-तक जीवित रहते देखे गये हैं, किंतु पानीके विना तो तीन दिन भी जीवित रहना कठिन है।

केशव—ओह ! ठीक है ! तब तो भोजन नहीं, बल्कि पानी ही जीवनके लिये सबसे जरूरी चीज कहा जायगा।

पिता—नहीं, अभी एक चीज और है, जो पानीसे भी ज्यादा जरूरी है।

केशव—वह क्या ?

पिता—वह है हवा। भोजनके बिना आदमी तीन महीनेतक जीवित रह सकता है और पानीके बिना तीन दिनतक; किंतु हवाके बिना तीन मिनट भी जीवित रहना कठिन है।

केशव—अयँ ! क्या हवा भी हमारे जीवनके लिये कोई जरूरी चीज है ?

पिता—जरूरी ही नहीं, बल्कि सबसे जरूरी चीज है। इसीसे हमारे प्राचीन ऋषियोंने संस्कृतमें हवाका एक नाम 'प्राण' भी बतलाया है।

केशव—तो क्या हवा न मिले तो हम जीवित नहीं रह सकते ?

पिता—यह तो तुम्हें अभी मालूम हो सकता है। देखो, मैं तुम्हारी नाकको दबाकर उसके दोनों छेद बंद किये देता हूँ और तुम अपने मुँहको भी अच्छी तरह बंद रखना। बस, अब जरा इसी तरह कुछ देर बैठे तो रहो।

केशव—ओफ ! इससे तो जी घबराता है और दम घुटने है।

पिता—हाँ, क्योंकि तुम्हारे शरीरके अंदर हवाके जाने-आनेका रास्ता बिल्कुल रुक गया। नाकके रास्ते यह हवा हमारे अंदर दिन-रात चौबीसों घंटे उठते-बैठते, खेलते-खाते, सोते-जागते, जानकर या अनजानमें हर घड़ी और हर पल श्वासके साथ-ही-साथ बराबर जाया-आया करती है। यदि क्षणभरके लिये भी यह रास्ता बंद हो जाय तो हमारा जी घबराने लगता है और यदि देरतक जबर्दस्ती बंद रक्खा जाय तो फिर हम मर ही जायँ।

केशव—कितनी-कितनी देरमें यह हवा हमारे अंदर जाया-आया करती है?

पिता—यह तो तुम घड़ीको सामने रखकर और श्वासोंको गिनकर स्वयं जान सकते हो। साधारण तौरपर एक मिनटमें १५ से १७ बारतक यह हवा हमारे श्वासके साथ शरीरके अंदर जाया-आया करती है। किंतु दौड़ने या कसरत करनेपर अथवा मनमें कोई उत्तेजना पैदा होनेपर इसकी चाल और तेज हो जाया करती है, जिससे हम हाँफने लगते हैं।

केशव—क्या यह हवा हमारे पेटके अंदर जाती है?

पिता—नहीं, पेटके अंदर तो हमारा खाया हुआ भोजन और पानी पहुँचता है। हवाके लिये दूसरे स्थान बने हैं। ये स्थान हमारी छातीकी गहराईमें दाहिने और बायें दोनों ओर मौजूद हैं। इन्हें फेफड़े कहते हैं। फेफड़ोंकी बनावट

स्पंज या समुद्र-झागकी तरह छेददार होती है। जिस प्रकार स्पंजमें बहुत-से छोटे-छोटे छेद होते हैं, उसी प्रकार फेफड़ोंमें भी होते हैं, किंतु फेफड़ोंके छेद इतने छोटे होते हैं कि बिना अणुवीक्षण यन्त्रकी सहायताके ये दिखायी तक नहीं पड़ते। इनके छोटेपनका अनुमान इसीसे किया जा सकता है कि दोनों फेफड़ोंमें कुल मिलाकर सात करोड़ पचीस लाखतक छेद मौजूद रहते हैं। इन छेदोंको 'वायुकोप' या हवाकी कोठरी कहते हैं। जिस समय हम श्वासको अंदर खींचते हैं, तो बाहरकी हवा हमारे अंदर फेफड़ोंमें पहुँचकर इन्हीं वायुकोपों-में घुस जाती है और उन्हें फुला देती है और जब हम श्वासको छोड़ते हैं तो हवा बाहर लौट आती है और तमाम वायुकोप पिचक जाते हैं। इस प्रकार सारी उम्र हमारे फेफड़ोंमें हवाका जाना-आना और वायुकोपोंका फूलना-पिचकना लगा रहता है।

केशव—किंतु जब यह हवा हमारे फेफड़ोंमें जा-जाकर फिर वापस चली आती है, तब उसके वहाँ जानेका मतलब ही क्या ?

पिता—मतलब बहुत भारी है, क्योंकि जब यह हवा हमारे फेफड़ोंमें पहुँचती है तो अपनी एक बहुमूल्य वस्तु हमारे खूनको दे देती है और जिस समय वह बाहर आती है तब हमारे खूनका बहुत-सा जहर अपने साथ लेती जाती है। इससे हमारा खून सदा साफ, शुद्ध और शक्तिदायक बना रहता है।

केशव—वह कौन-सी बहुमूल्य वस्तु है, जिसे यह हवा हमारे खूनको दे आती है ?

पिता—उस वस्तुका नाम 'आक्सिजन' है । यह एक प्रकारकी गैस या भाप है, जो हवामें मौजूद रहती है।

केशव—उससे हमें लाभ क्या होता है ?

पिता—हमारे शरीरके अंदर एक प्रकारकी अग्नि धीमी-धीमी चालसे जला करती है और उसमें हमारे शरीरके तत्त्व हर समय जल-जलकर भस्म होते रहते हैं। यह काम बिना आक्सिजनकी सहायताके नहीं हो सकता; क्योंकि अग्निके जलनेके लिये आक्सिजनका होना जरूरी है । साथ ही आक्सिजनकी सहायतासे हमारे खाये हुए भोजनका रस भी शरीरमें सोखकर काममें आ जाता है ?

केशव—अरे ! क्या हमारे शरीरके तत्त्व जल-जलकर भस्म होते रहते हैं ?

पिता—हाँ, दिन-रात हर घड़ी और हर पल हमारे शरीरके तत्त्व जल-जलकर भस्म होते रहते हैं । जिस प्रकार रातको घरमें प्रकाश बनाये रखनेके लिये दीपकका जलते रहना जरूरी है, उसी प्रकार हमारे शरीरके अंदर भी जीवनका प्रकाश बनाये रखनेके लिये इन तत्त्वोंका जलते रहना आवश्यक है।

केशव—यह तो बड़े अचरजकी बात है । भला, यह शरीर यदि हर समय अपने तत्त्वोंको जला-जलाकर नष्ट करता रहता है तो अबतक टिका कैसे है ?

पिता—जो तत्त्व जलकर नष्ट हो जाते हैं, उनकी जगहपर नये-नये तत्त्व बनते भी रहते हैं।

केशव—लेकिन पुराने तत्त्वके इस प्रकार जल-जलकर नष्ट होने और फिर उनकी जगह नये-नये तत्त्वोंके बननेसे मतलब क्या ?

पिता—इससे हमारे शरीरमें गरमी, स्फूर्ति तथा शक्ति पैदा होती है और साथ ही, जैसा कि हम पहले कह चुके हैं, हमारे अंदर जीवनका प्रकाश बना रहता है।

केशव—समझ गया। अच्छा, आपने जो पहले कहा था कि हवा हमारे श्वासके साथ बाहर निकलते समय हमारे खूनका बहुत-सा जहर अपने साथ लेती जाती है, सो यह जहर हमारे खूनमें कहाँसे आ जाता है ?

पिता—तुम जानते हो कि जब कोई चीज जलती है तो उससे कुछ धुआँ और कुछ राख पैदा होती है। अस्तु, हमारे शरीरके तत्त्वोंके भी जलनेसे एक प्रकारका जहरीला धुआँ, जिसे 'कार्बोनिक एसिड' गैस कहते हैं और कुछ अन्य जहरीली चीजें हर समय पैदा होती रहती हैं। ये सब खूनके साथ मिलकर बहती हुई हमारे फेफड़ोंमें पहुँचती हैं और वहाँसे श्वासके साथ हवामें मिलकर बाहर निकल जाती हैं। साथ ही हवामें जो आक्सिजन मौजूद रहती है वह खूनमें जा मिलती है, जिसे लेकर खून सारे

शरीरमें फिर चक्कर लगाने लगता है। इस प्रकार तुम देखते हो कि हवाका बहुमूल्य आक्सिजन खूनके साथ-साथ शरीरके हर एक भागमें बराबर पहुँचता रहता है और अंदरकी जहरीली वस्तुएँ फेफड़ोंमें आ-आकर हर समय बाहर निकलती रहती हैं । यह सारी क्रिया हमारे शरीरमें श्वासद्वारा हवाके आने-जानेसे ही हुआ करती है और जीवनपर्यन्त बराबर जारी रहती है। इसीसे हमारा जीवन भी सम्भव है।

केशव—परंतु पिताजी! एक बात यह बतलाइये कि जब पृथ्वीके तमाम मनुष्य और दूसरे प्राणी इस प्रकार दिन-रात हवामेंसे आक्सिजन गैस श्वासद्वारा ले-लेकर कार्बोनिक एसिड गैस उसमें मिलाते रहते हैं तो हवाका सारा आक्सिजन अबतक चुक क्यों नहीं जाता और यह हवा कार्बोनिक एसिड गैससे भर क्यों नहीं उठती ?

पिता—शाबाश! तुम्हारा यह प्रश्न सचमुच ही बहुत तर्कपूर्ण है; किंतु परमात्माकी कारीगरीमें कहीं कोई अधूरापन नहीं दिखायी देता। उसने इसके लिये भी बड़ा अच्छा प्रबन्ध कर रक्खा है। संसारमें ये जितने पेड़-पौधे दिखायी देते हैं, वे भी हवामें हमारी ही तरह श्वास लिया करते हैं । हम अपनी नाकके द्वारा श्वास लेते हैं और वे अपनी पत्तियोंके द्वारा। फिर भी उनकी श्वासक्रिया हमारी श्वासक्रियासे विपरीत ढंगकी होती है, अर्थात् हम तो अपने

श्वासद्वारा आक्सिजन गैसको पीते हैं, किंतु वे इसे सूर्यके प्रकाशसे बाहर उगलते रहते हैं। और हम कार्बोनिक एसिड गैसको श्वासद्वारा बाहर उगलते हैं किंतु वे उसे पिया करते हैं। इस प्रकार हमारी त्याग की हुई चीज उनके काममें और उनकी त्याग की हुई चीज हमारे काममें आ जाती है और इस तरह बस, दोनोंका काम बराबर चलता रहता है। साथ ही हवाकी शुद्धता भी नष्ट नहीं होने पाती।

केशव—वाह, यह प्रबन्ध तो सचमुच ही बड़ा बढ़िया है; किंतु जहाँ पेड़-पौधे नहीं रहते, वहाँकी हवाका क्या हाल होता है?

पिता—हवा स्वभावसे ही एक स्थानसे दूसरे स्थानको बहनेवाली चीज है। अतएव तमाम ऐसी जगहोंमें, जो चारों ओरसे खुली हुई हैं और जहाँ हवाके जाने-आनेमें कोई बाधा नहीं पहुँचती, हवा बराबर शुद्ध बनी रहती है। उदाहरणके तौरपर घनी आबादीवाले बड़े-बड़े नगरोंकी हवासे गाँवों और देहातोंकी हवा ज्यादा अच्छी होती है। और गाँवोंकी हवासे भी खेतों, बगीचों और जंगलोंकी हवा अच्छी होती है। समुद्रतटपर और पहाड़ोंकी हवा भी बहुत शुद्ध होती है; किंतु ऊँचे-ऊँचे मकानोंसे घिरी हुई तंग गलियोंकी हवा अच्छी नहीं होती; क्योंकि वहाँ हवा स्वतन्त्रतापूर्वक आ-जा नहीं सकती। इसी प्रकार जिन मकानोंमें चौड़ा आँगन न हो, खुली हुई चौड़ी छतें न हों,

हवादार खिड़कियों और दरवाजोंका प्रबन्ध न हो अथवा जो चारों ओरसे ऊँचे-ऊँचे मकानोंसे घिरे हुए हों या तंग गलियोंमें हों, उनकी हवा भी अच्छी नहीं होती। नाट्यशालाओं और सिनेमाघरोंकी हवा तो बहुत ही खराब रहती है; क्योंकि चारों ओरसे बंद रहनेके कारण बाहरकी ताजी हवा वहाँतक पहुँच नहीं सकती और सैकड़ों आदमी घंटोंतक वहीं बैठकर तमाशा देखते हैं, जिससे सारा स्थान उनके श्वासद्वारा निकली हुई जहरीली हवासे भर जाता है और स्वास्थ्यको खराब करता है।

केशव—ऐसी हवासे हमारे स्वास्थ्यको किस प्रकारकी हानियाँ पहुँचती हैं?

पिता—इससे हमारा मन बिगड़ जाता है, सुस्ती और आलस्य घेरे रहते हैं, सिर दर्द करने लगता है तथा चक्कर आ जाता है, और यदि हवा बहुत ज्यादा खराब हुई तो फिर बेहोशी या मृत्यु भी हो जाती है।

केशव—क्या ऐसी मृत्युके कोई उदाहरण देखनेमें आये हैं?

पिता—हाँ हाँ, एक नहीं अनेक उदाहरण हैं और कभी-कभी समाचारपत्रोंमें नये उदाहरण छपते भी रहते हैं। अभी कुछ ही दिन हुए मैंने स्वयं एक पत्रमें पढ़ा था कि एक देहाती स्त्री अपने तीन बच्चोंके साथ एक नन्ही-सी कोठरीमें दरवाजा बंद करके सो रही थी और अंदर एक मिट्टीके तेलका दिया जल रहा था। सवेरे देखा गया कि

उसके तीन बच्चोंमेंसे दो छोटे बच्चे तो मर चुके थे और तीसरा बच्चा बेहोश था तथा स्त्रीकी हालत भी अच्छी नहीं थी। खदानोंके अंदर भी कभी-कभी हवा बहुत ही खराब हुआ करती है और उससे भी कितने ही आदमियोंकी मृत्यु हो चुकी है। इसीसे अब किसी गहरे कुएँ या खदानमें उतरते समय उसके अंदर एक जलती हुई लालटेन लटकाकर देख लिया जाता है कि वहाँकी हवा ठीक है या नहीं। कोई भी लालटेन या दीपक आक्सिजनके न रहनेपर जल नहीं सकते। अतएव यदि नीचे जाते ही लालटेन बुझ जाती है तो समझ लेते हैं कि वहाँकी हवामें आक्सिजन गायब है और इसलिये वहाँ कोई आदमी जीवित नहीं रह सकता। यदि लालटेन जलती रही तो फिर नीचे उतरनेमें हर्ज नहीं समझा जाता। इटलीमें तो एक ऐसी गुफा मौजूद है जहाँ जमीनसे कमरकी ऊँचाईतक हवा बेहद ज़हरीली है, किंतु उससे ऊपर अच्छी है। अतएव वहाँ मनुष्य तो बेखटके चल-फिर सकता है एवं खड़ा रह सकता है; किंतु बिल्ली या कुत्ते वहाँ जाते ही मर जाते हैं।

केशव—तब तो बुरी हवासे हमें बहुत सावधान रहनेकी जरूरत है।

पिता—अवश्य। हर एक स्वास्थ्यका सुख चाहनेवाले बुरी हवामें खड़ेतक न होना चाहिये। साथ ही

ध्यान रखना चाहिये कि जहाँ हम या दूसरे लोग रहते या उठते बैठते हों, वहाँका हवा भरसक खराब न होने दें। बहुधा आलसी तथा गंदे लोगोंकी आदत होती है कि जहाँ बैठते हैं, वहीं बीड़ी-सिगरेटका धुआँ उड़ाने लगते हैं, थूकते हैं, नाक साफ करते हैं अथवा आस-ही-पास मल-मूत्रतक त्याग देते हैं। इस प्रकारके दृश्य रेलके डिब्बोंमें, धर्मशालाओंमें, थियेटर और सिनेमाघरोंमें तथा बड़े-बड़े मेलोंमें नित्य ही देखनेमें आते हैं। ऐसे लोग समाजके प्रति बहुत बड़े अपराधी हैं और दूसरोंका स्वास्थ्य खराब करनेके साथ-साथ अपने स्वास्थ्यको भी बिगाड़ते रहते हैं। ध्यान रहे कि हवासे ही हमारा जीवन है और इसे लापरवाहीसे खराब करना स्वयं अपने पैरोंमें कुल्हाड़ी मारना है।

केशव—सो तो है ही। मैं इसे जरूर ध्यानमें रक्खूँगा।

पिता—हाँ, और इसके साथ ही कुछ और भी थोड़ेसे श्वास-सम्बन्धी नियम हैं, जिनपर हर एक स्वास्थ्य चाहनेवाले आदमीको सदा ध्यान रखनेकी जरूरत है।

केशव—वे क्या हैं ?

पिता—पहला नियम तो यह है कि सदा अपनी नाकसे ही श्वास लो। मुँहसे श्वास कभी मत लो। ईश्वरने श्वास लेनेके लिये नाकको ही बनाया है, मुँहको नहीं; अतएव उसने नाकके अंदर इसके लिये कुछ विशेष प्रबन्ध भी कर रक्खा है, जिससे हवा शुद्ध होकर ठीक हालतमें अंदर जाय।

नगरोंमें या वस्तीके अंदर जो हवा हम दिन-रात श्वासद्वारा अंदर लेते हैं, उसमें वहुत-सी ऊपरकी चीजें मिली रहती हैं—जैसे धूलके छोटे-छोटे कण, भूसा, नन्हे-नन्हे जीवाणु, मनुष्य या पशुके शरीरसे निकली हुई गंदी वस्तुएँ, रूई या सनके रेशे इत्यादि। नाकसे श्वास लेनेपर ये चीजें नाकके बालोंमें फँसकर बाहर रह जाती हैं और छनी हुई हवा ही अंदर प्रवेश करती है। अंदर जानेपर नाककी श्लैष्मिक झिल्लियोंद्वारा यह हवा कुछ और अधिक छन जाती है और साथ ही कुछ गरम और गीली भी हो जाती है, तब वह फेफड़ोंमें प्रवेश करती है। किंतु मुँहसे श्वास लेनेपर हवाके साथ-साथ धूल-कण तथा अन्य वस्तुएँ बेरोक-टोक अंदर चली जाती हैं और गलेकी नाली, श्वास-नाली या फेफड़ेकी दीवारोंमें चिपक-कर प्रदाहजनित कितने ही प्रकारके रोगोंको जन्म देती हैं, जैसे खाँसी, दमा, हफनी इत्यादि। अतएव मुँहसे श्वास लेना किसी समय भी उचित नहीं। कुछ लोगोंका मुँह सोते समय खुला रह जाता है और वे मुँहसे ही श्वास लिया करते हैं। इसी प्रकार दौड़ते या कसरत करते समय भी कितने ही लोग मुँहसे श्वास लेते हैं। ये आदतें ठीक नहीं।

केशव—समझ गया। दूसरा नियम क्या है?

पिता—दूसरा नियम यह है कि सोते समय मुँह और नाकको ढाँककर कभी मत रक्खो। सर्दी अधिक हो तो ·ीरके साथ-साथ सिर और कानोंको ढाँक लो, परंतु चेहर

तो हर समय खुला ही रक्खो, क्योंकि चेहरा ढाँक रखनेसे श्वासद्वारा निकली हुई गंदी हवा बाहर जा नहीं पाती और उसी गंदी हवामें बार-बार श्वास लेना पड़ता है। बहुधा देखा जाता है कि केवल मूर्ख और अपढ़ लोग ही नहीं, बहुत-से पढ़े-लिखे लोग भी अपना चेहरा ढाँककर ही सोते हैं और अपने श्वासद्वारा उगली हुई गंदी हवाको बार-बार पीते रहते हैं। यदि उनसे कहा जाय कि अपनी कै की हुई चीजको फिरसे खा लो तो शायद वे घृणा और क्रोधसे पागल बन जायँगे, परंतु आश्चर्य है कि अपनी कै की हुई गंदी हवाको बारंबार पीते रहनेपर भी उनका जी जरा नहीं घिनाता।

केशव–तीसरा नियम क्या है?

पिता–तीसरा नियम यह है कि जहाँतक हो सके खुली हुई ताजी और साफ हवामें ही रहनेका प्रयत्न करो। यदि हर समय नहीं तो भरसक अधिक-से-अधिक समय ही खुली हुई हवामें बितानेका प्रयत्न करो। कमरेमें कितनी ही हवादार खिड़कियाँ और दरवाजे हों, किंतु उसकी हवा खुले हुए मैदानकी हवाको नहीं पा सकती। अतएव यदि कमरेकी आवश्यकता पड़े तो भी समय-समयपर पाँच-सात मिनटके लिये बाहर खुलेमें निकल जाओ और गहरी साँस-बार-बार खींचते और छोड़ते रहो। इस प्रकार शुद्ध वायुकी बहुत कुछ कसर पूरी हो जायगी। सोनेके लिये जाड़के

दिनोंमें दालान या बरामदेमें सोओ अथवा यदि कमरे या कोठरीमें सोना पड़े तो उसकी खिड़कियाँ खुली रक्खो, जिससे हवा अंदर बराबर आती-जाती रहे। सर्दी लगे तो ओढ़नेके लिये कपड़े अधिक ले लो, परंतु खिड़कियाँ न बंद करो। रेलगाड़ियोंमें बहुधा देखते हैं कि जाड़ेके दिनोंमें यात्री लोग रातमें तमाम खिड़कियाँ बंद कर देते हैं और फिर पचीसोंकी संख्यामें उन्हीं बंद डिब्बोंके अंदर सोते रहते हैं। इससे अंदरकी सारी हवा जहरीली हो जाती है। इतना ही नहीं, बहुत-से लोग तो बंद डिब्बेमें बीड़ी और सिगरेटका धुआँ भी उड़ाया करते हैं, जिससे वहाँकी हवा और भी असहनीय हो उठती है। ये सब बातें स्वास्थ्यको बहुत हानि पहुँचानेवाली हैं।

केशव–मैं इस बातको भी याद रक्खूँगा। क्या कोई चौथा नियम भी है?

पिता–हाँ, चौथा नियम यह है कि सदैव दीर्घ और गहरी श्वास लेनेकी आदत डालो। हमारे फेफड़ोंके अंदर जितनी हवा समा सकती है, साधारण तौरपर उसका चौथाई हिस्सा भी हम अपने श्वासद्वारा अंदर नहीं लेते। और इसी प्रकार जितनी हवा बाहर निकल सकती है, उसका बहुत थोड़ा भाग बाहर निकालते हैं। दीर्घ और गहरी साँस लेनेसे यह हवा हमारे अंदर अधिक परिमाणमें जाने-आने लगेगी, जिससे हमारे खूनको आक्सिजन अधिक मिलेगा और उसकी सफाई

भी अधिक होगी। परिणाममें हमारे अंदर स्फूर्ति और शक्ति भी अधिक पैदा होगी। और साथ ही आयुकी वृद्धि होगी।

केशव—लेकिन पिताजी! यह आदत डाली कैसे जाय? मेरे तो दो ही चार बार लंबी साँस खींचनेसे सिरमें दर्द हो उठता है और वह चक्कर खाने लगता है।

पिता—ये लक्षण फेफड़ोंकी दुर्बलताको सूचित करते हैं, परंतु मैं तुम्हें एक ऐसा सीधा-सा उपाय बतलाता हूँ, जिससे तुम्हारे फेफड़े कुछ ही दिनोंमें मजबूत हो जायँगे और तुम दीर्घ तथा गहरी साँस लेना बहुत जल्द सीख जाओगे।

केशव—कहिये, मैं सुन रहा हूँ।

पिता—देखो, सवेरे खूब तड़के उठो और शौच इत्यादि-से छुट्टी पाकर स्वच्छ खुली हुई वायुमें पैदल टहलनेके लिये निकल जाओ। चलते समय सिरको सीधा रक्खो, कंधे पीछे-को रहें और छाती आगेको तनी रहे। इसी प्रकार जरा तेजीके साथ कदम बढ़ाते हुए कुछ देर चलते रहो, किंतु तुम्हारे कदम सब सीधे और एक रास ही पड़ने चाहिये। अब अपनी श्वासको धीरे-धीरे खींचना आरम्भ करो और साथ ही अपने कदमोंको भी मन-ही-मन गिनते जाओ। आरम्भमें जितनी श्वास बिल्कुल आसानीसे खींच सकते हो उतनी ही खींचो, अधिक नहीं। मान लो कि अभी तुम

केवल दस कदमतक श्वासको खींच सकते हो, तो उतनी ही खींचो। फिर आगे दस कदमतक उसी प्रकारसे उसे बाहर छोड़ो। इस प्रकार कुछ दूरतक बराबर करते जाओ। दूसरे दिन इसी प्रकार थोड़ी दूर और आगे जाओ। इस तरह दूरी क्रमशः बढ़ाते जाओ। एक सप्ताहके बाद दस कदमके बजाय बारह कदमतक श्वासको खींचना और छोड़ना आरम्भ करो। फिर पंद्रह कदमतक और तत्पश्चात् अठारह या बीस कदम-तक यही क्रिया करो। इस प्रकार धीरे-धीरे दूरी तथा श्वास-की मात्रा बढ़ाते जाओ। एक महीनेके पश्चात् श्वासको खींचनेके बाद प्रत्येक बार जरा-सा अर्थात् दो या तीन कदमतक रोककर तब छोड़ने और फिर दो या तीन कदम-तक रोककर तब खींचनेका भी अभ्यास करो और इसे भी थोड़ा-थोड़ा बढ़ाते जाओ। सुननेमें ये सारी बातें बड़े झंझटकी मालूम होती हैं, किंतु करनेमें बिल्कुल आसान हैं और कुछ ही समयके अभ्याससे फिर ऐसी आदत पड़ जाती है कि मनुष्य चलते समय आप-से-आप दीर्घ निःश्वास-प्रश्वास करने लग जाता है और उसे इस ओर ध्यान देनेकी जरूरत ही नहीं पड़ती। मैंने स्वयं इसका बहुत दिनोंतक अभ्यास किया है और बहुत काफी लाभ उठाया है। इससे तुम्हारे फेफड़े खूब मजबूत हो जायँगे और सब प्रकारके श्वास-सम्बन्धी रोगोंसे बचाव रहेगा। हमारे प्राचीन ऋषियोंने इसी प्रकारकी, किंतु इससे बहुत पेंचीली और ऊँचे ढंगकी

श्वासोंकी कसरत लिखी है, जिसे प्राणायाम* कहते हैं। उसकी महिमा बहुत बड़ी गायी गयी है †और उसे योगसाधनकी प्रथम सीढ़ी कहा जाता है। किंतु बिना गुरुके वह नहीं आ सकती। इसलिये उसकी उलझनोंमें तुम्हें यहाँ पड़नेकी जरूरत नहीं। साधारण तौरपर स्वास्थ्य और शक्ति प्राप्त करनेके लिये हमारी ऊपर बतलायी हुई स्वास्थ्यकी कसरत बहुत ही सीधी और सुन्दर है। तथा हमारी आजमायी हुई भी है। इसे यदि तुम नियमपूर्वक करते रहोगे तो कुछ ही दिनोंमें आशातीत लाभ देखोगे।

केशव—मैं इसे कलसे ही आरम्भ कर दूँगा।

पिता—बस, फिर ईश्वर इसका शुभ फल भी तुम्हें देगा।

---

* प्राणो वायुरिति ख्यात आयामस्तन्निरोधनम्।
प्राणायाम इति ख्यातं योगिनां योगसाधनम्॥

(तन्त्रसार).

† प्राणायामात् परं तत्त्वं प्राणायामात् परं तपः।
प्राणायामात् परं ज्ञानं प्राणायामात् परं पदम्॥
प्राणायामं विना यद् यत् साधनं निष्फलं भवेत्।
प्राणायामं विना मन्त्रपूजने न हि योग्यता॥

(गौतमीये)

मानसं वाचिकं पापं कायिकं चापि यत् कृतम्।
तत् सर्वं निर्दहेच्छीघ्रं प्राणायामत्रयेण तु॥

(कुलार्णवे).

शारीरिक, मानसिक और आत्मिक शुद्धि

पिता—बेटा केशव ! आज तुम्हें कुछ शुद्धि और स्वच्छताके विषयमें बताना चाहता हूँ, सुनोगे ?

केशव—हाँ-हाँ पिताजी ! अवश्य । कहिये, मैं सुन रहा हूँ ।

पिता—अच्छा, बतलाओ स्वच्छता या सफाई हमारे लिये क्यों आवश्यक समझी जाती है ?

केशव—इसलिये कि साफ-सुथरा लड़का देखनेमें अच्छा लगता है और उसे सब प्यार करते हैं । मैला-कुचैला लड़का देखनेमें बुरा लगता है और उससे सब घृणा करते हैं ।

पिता—हाँ ठीक है, पर इसकी आवश्यकता इसलिये और भी अधिक है कि स्वच्छताके द्वारा अनेक प्रकारके रोग और

विकारोंसे रक्षा मिलती है। उदाहरणार्थ--प्लेग, हैजा, मियादी बुखार, फोड़ा-फुंसी, खुजली-चेचक आदि सब अस्वच्छतामें ही जन्म पाते और फूलते-फलते हैं। यदि स्वच्छताके नियमोंका पूरा-पूरा पालन होता रहे तो वैज्ञानिकोंका कहना है कि इस प्रकारकी तमाम बीमारियोंसे यथेष्ट रक्षा मिल सकती है।

केशव--अच्छा, तो ये नियम क्या हैं ?

पिता--देखो, स्वच्छता वैसे तो कई प्रकारकी है, जैसे नगरकी या गाँवकी स्वच्छता, घरकी स्वच्छता, भोजन और वस्त्रोंकी स्वच्छता तथा शरीरकी स्वच्छता; किंतु यहाँ हम आज तुमसे केवल शरीरकी स्वच्छतापर ही बातें करेंगे। इसके बाद फिर कुछ मन और आत्माकी निर्मलतापर भी बतलायेंगे।

केशव--शरीरकी स्वच्छता तो नित्य स्नान कर लेनेसे ही पूरी हो जाती है ?

पिता--हाँ, यदि स्नान ठीक ढंगसे किया जाय। इसके साथ ही मुँह, दाँत, नाक, कान और आँख आदि अङ्गोंकी तथा पेटकी सफाई भी नित्य नियमपूर्वक करना आवश्यक है।

केशव--पेटकी सफाई तो शौच जाकर सभीको करनी पड़ती है। क्या उसमें भी कोई जानने या समझने योग्य बात है ?

पिता—हाँ अवश्य। कितने लोग ऐसे हैं जिनके शौच जानेका कोई बँधा समय नहीं रहता। देर-सवेर जभी इच्छा हुई या आवश्यकता जान पड़ी, तभी हो आये। कितने बालक-बालिकाएँ ऐसे हैं जो सवेरा होते ही बिना शौच गये या मुँह-हाथ धोये सीधे भोजनपर ही टूटते हैं। यह एक बुरी आदत है और इससे बहुधा पाचन-सम्बन्धी अनेक रोग—जैसे कोष्ठबद्ध, आँव, अतिसार, मन्दाग्नि, रक्तविकार आदि पैदा हो जाया करते हैं, अतएव शौचके लिये नित्य नियम बाँधकर ठीक बँधे हुए समयपर ही जाना अत्यन्त आवश्यक है। सबसे अच्छा समय इसके लिये सवेरेका ही है। कुछ लोगों-को दिनमें दो बार शौच जानेकी आदत होती है, सवेरे और संध्या-समय। ऐसे लोग दोनों समय जा सकते हैं, किंतु बाकी सब लोगोंको कम-से-कम एक बार सवेरे—सोकर उठनेके बाद—अवश्य शौच जाना चाहिये। जानेके पहले यदि दो-चार कुल्ले करके थोड़ा-सा पानी पी लिया जाय तो और भी अच्छा होगा। इस प्रकार यदि समय बाँधकर रोज सवेरे ही शौच जायँ तो जिन्हें सवेरे टट्टी नहीं लगती, उन्हें भी कुछ ही दिनोंके अभ्याससे ठीक समयपर उसका वेग जान पड़ेगा और पेट साफ हो जाया करेगा। बात यह है कि यह शरीर स्वभावतः अपनी आदतोंका दास होता है। जैसी आदत इसे आरम्भसे डाली जाय, उसीसे यह बँध जाता है और फिर प्रयत्न करनेपर भी वह आदत जल्दी नहीं

छूटती। अस्तु, बालकोंको चाहिये कि अभीसे वे सदैव अच्छी और सही आदतें डालने और बुरी आदतोंसे बचनेका पूरा-पूरा ध्यान रक्खें।

केशव—पिताजी! मैं तो रोज सवेरे उठकर जरूर पाखाने जाता हूँ।

पिता—बहुत अच्छा करते हो। साथ ही दाँत, मुँह, नाक, कान और आँखोंको भी रोज धोने और साफ करनेकी जरूरत है। सवेरे सोकर उठनेपर तुम देखोगे कि मुँहके भीतर कुछ मैल और चिपचिपापन-सा जान पड़ता है, जो एक प्रकारकी अम्लताके कारण है। इसके अतिरिक्त दाँतोंकी सन्धिमें भी जो भोजनके नन्हे-नन्हे अंश जमा हो जाते हैं वे यदि रोज साफ न किये जायँ, तो दाँतोंकी सन्धि तथा जड़ोंमें एक कठोर पीली पपड़ीके रूपमें जमते जाते हैं और फिर विकृत होकर सड़ने लगते हैं। इससे मुँह न केवल दुर्गन्धयुक्त बना रहता है, बल्कि मसूड़े फूलकर पीड़ित भी हो उठते हैं और दाँतोंकी जड़से खून तथा पीब आने लगता है। परिणाममें दाँत शीघ्र ही कमजोर हो जाते हैं, गिर जाते हैं, अतएव इस बातकी बहुत बड़ी आवश्यकता है कि दाँतोंको प्रतिदिन कम-से-कम एक बार—प्रातः समय—अवश्य माँजकर साफ कर लिया जाय, जिससे वहाँ मैल न जमने पावे। माँजनेके लिये यद्यपि बाजारोंमें भाँति-भाँतिके देशी

और विलायती मंजन बिका करते हैं; परंतु मुझे स्वयं अपने अनुभवमें जो सबसे बढ़िया और सस्ता साधन इसके लिये सिद्ध हुआ, वह है नीमकी ताजी दातुन। इसीकी एक छड़ लेकर और उसके एक सिरेको दाँतोंसे चबा-चबाकर खूब अच्छी-सी कूँची तैयार कर दे और फिर उसीसे हर एक दाँतको ऊपर-नीचे, भीतर-बाहर, जड़ोंके पास तथा सन्धियोंमें रगड़-रगड़कर अच्छी तरह माँजे। किंतु ध्यान रहे कि जरूरतसे ज्यादा दाँतोंको रगड़ना भी ठीक न होगा, कारण कि इससे दाँतोंकी कलई (Enamel) छूट जानेका भय है। बस, नित्य नियमपूर्वक दातुनसे प्रत्येक दाँत चारों ओरसे चार या पाँच बार भलीभाँति रगड़ लेना काफी होगा। इस प्रकार सब दाँत माँज चुकनेके बाद उसी दातुनका छिलका निकालकर मुँहमें भर लेना चाहिये और फिर उसे इस प्रकार चबाना चाहिये कि छिलकेका सारा रस मुँहमें आ जाय। तब छिलकेका सीठा बाहर फेंक दे और रसको मुँहके अंदर कुछ मिनटोंतक इस प्रकार गुड़गुड़ाता रहे कि वह दाँतोंकी सन्धि तथा जड़ोंमें अच्छी तरह पहुँच जाय। पश्चात् उसे थूककर शुद्ध जलसे कुल्ले कर डाले और फिर, उसी नीमकी छड़को बीचसे चीरकर जीभी बना ले और उस जीभीके द्वारा जीभको भी अच्छी तरह साफ कर ले। तत्पश्चात् पानीसे फिर बार-बार कुल्ले करके मुँहको अच्छी तरह साफ कर ले। इस प्रकार प्रतिदिन यदि नियमपूर्वक दातुन की

जाय, तो दाँत मोतीकी तरह चमकदार बनकर सदैव सुदृढ़ और नीरोग रह सकते हैं।

केशव—अच्छा पिताजी ! अब मैं भी इसी विधिसे नित्य नियमपूर्वक दातुन किया करूँगा।

पिता—हाँ, और उसीके साथ नित्य नाक, कान और आँखोंको भी धोना और साफ करना आवश्यक है। नाकको साफ करनेके लिये पहले उसे अच्छी तरह छिनक डालो। पश्चात् किसी साफ रूमाल या अंगोछेका एक कोना गीला करके और उसमें अँगुली लगाकर नाकके दोनों छिद्रोंको अच्छी तरह पोंछ डालो, जिससे अंदरकी सारी मैल निकल जाय। तब चूल्लूमें बार-बार पानी लेकर नाकके भीतर चढ़ाओ और छिनको। इस प्रकार कई बार करनेसे नाक भीतरसे बिल्कुल साफ हो जायगी। इसी प्रकार कान और आँखोंको भी साफ करनेके लिये गीले कपड़ेमें अँगुली लगाकर अच्छी तरह पोंछ लेना चाहिये और फिर शुद्ध जलके छींटे दे-देकर उन्हें धो डालना चाहिये।

केशव—अच्छा, अब स्नानके विषयमें भी बतलाइये।

पिता—स्नान तो हम हिंदुओंमें एक धार्मिक कृत्य समझा जाता है और इसीलिये अधिकतर लोग यहाँ स्नान किये बिना भोजन नहीं करते। यह है तो बड़ी अच्छी बात; किंतु बहुधा यह स्नान केवल रस्मी तौरपर हुआ करता है, अर्थात्

केवल दो लोटा पानी सिरपर उँड़ेलकर अथवा नदी या तालाबमें दो-एक डुबकी लेकर ही स्नानकी रस्म पूरी कर ली जाती है; किंतु स्नानका वास्तविक अर्थ शरीरकी कुल मैल धोकर उसे स्वच्छ बनाना है। ये जो अनगिनती रोएँ हमारे शरीरपर उगे हुए दीखते हैं, इनकी जड़ोंके मार्गसे शरीरका तमाम पसीना और भीतरकी मैल हर घड़ी और प्रतिक्षण बाहर निकलती रहती है। यदि इसे रोज धोकर साफ न करते रहें तो इससे मैलके निकलनेमें रुकावट आयेगी और फिर भाँति-भाँतिके चर्म-विकारोंका भय उपस्थित होगा। इसलिये आवश्यक है कि स्नानके समय शरीरपरकी सारी मैल नित्य धोकर साफ कर दी जाय। इस कामके लिये एक साफ मोटा तौलिया या गाढ़ेका अँगोछा हाथमें लेकर पानीमें भिगो लेना चाहिये और फिर उसीसे शरीरके हर एक भागको अच्छी तरह रगड़-रगड़कर पानीसे धोना चाहिये। तत्पश्चात् पानीकी धारसे सिर और सारे शरीरको पूर्ण स्नान कराना चाहिये और अन्तमें किसी साफ और सूखे तौलियासे शरीरको पोंछकर कपड़े पहन लेने चाहिये।

केशव—स्नानके लिये पानी ठंढा ठीक है या गरम ?

पिता—वैसे तो पानी ठंढा ही सर्वश्रेष्ठ है, परंतु शरीर यदि बहुत दुर्बल हो अथवा बदनमें गर्मी बहुत कम हो तो गरम पानी भी लिया जा सकता है।

केशव—समझ गया। अब आगे बतलाइये।

पिता—यहाँतक तो मैंने शारीरिक शुद्धिकी चर्चा की। अब कुछ मानसिक तथा आत्मिक शुद्धिके विषयमें भी जानना जरूरी है, कारण कि मानसिक निर्मलताके बिना शरीरकी सारी सफाई बिल्कुल अर्थहीन है, जैसा कि कहा है—

मनका मल धोया नहीं, तन क्या रहा बनाय।
यह तन इक दिन राख बन, धूल संग उड़ जाय॥

और भी—

मन काला तन उज्ज्वल लेकर पापी क्या इतरावे।
घरमें घोर अँधेरा भरकर बाहर दीप जलावे॥

अस्तु, बिना मनकी शुद्धिके शरीरकी सारी सफाई, तमाम चमक-दमक केवल 'विष रस भरा कनक-घट जैसे' ही समझनी चाहिये। विषसे भरा हुआ सोनेका घड़ा जिस प्रकार अनिष्टसाधनके सिवा और किसी उपयोगका नहीं, ठीक उसी प्रकार मलिन और दूषित मनवाला शरीर भी कितना ही साफ-सुथरा और सजा-धजा हो, किंतु सिवा पाप, अनिष्ट और अपकारके इस संसारमें उसका और कोई भी उपयोग नहीं।

केशव—तो फिर मनकी शुद्धिका उपाय क्या है?

पिता—जिस प्रकार शरीरकी शुद्धि और स्वच्छताका साधन जल है, उसी प्रकार मनकी शुद्धिका मुख्य साधन

सत्य-सेवा है। एकमात्र सत्यका ही अवलम्बन, उसीमें पूरी-पूरी श्रद्धा, सत्यकी ही जिज्ञासा, सत्य-विचार, सत्याचरण और सत्यभाषण ही मनकी स्वच्छता प्राप्त करनेका पहला और सबसे बड़ा उपाय है। निस्संदेह यह उपाय इस पेंचीली दुनियामें सीधा और सरल नहीं कहा जा सकता। इसके मार्गमें अनेक विघ्न, बहुतेरी बाधाएँ, भाँति-भाँतिके प्रलोभन और तरह-तरहके क्लेश एवं विपत्तियाँ हैं; किंतु जो सत्यके सच्चे पुजारी हैं, उन्हें ये विघ्न-बाधाएँ न तो डरा या भटका सकती हैं और न उनका मार्ग ही रोक सकती हैं। वे सदा सत्यके नशेमें चूर बेखटके अपने रास्तेपर आगे बढ़ते जाते हैं और अपना तन, धन, प्राण और कुटुम्ब सब कुछ सत्यकी ही सेवामें न्योछावर कर देते हैं। बस, इसी प्रकार वे संसारमें अपना नाम सदैवके लिये अमर कर जाते हैं और मानव-समाजके लिये एक जीता-जागता उदाहरण छोड़ जाते हैं। इन सत्यवीरोंके दृष्टान्त हमारे प्राचीन ग्रन्थोंमें तमाम भरे पड़े हैं और आजतक भी ध्रुव, प्रह्लाद, हरिश्चन्द्र, युधिष्ठिर आदिकी पवित्र कथाएँ बड़ी श्रद्धा एवं भक्तिके साथ कही तथा सुनी जाती हैं। इसी प्रकार इतिहास भी भगवान् बुद्ध, आत्मवीर सुकरात, महात्मा ईसामसीह आदि कितनी ही सत्य-विभूतियोंके अलौकिक जीवनकी गवाही दे रहा है।

हमारे वर्तमान युगमें भी महात्मा टालस्टाय, महात्मा

गाँधी, महर्षि कागावा आदि अनेक सत्य-महारथियोंकी आदर्श जीवनियाँ हमें सत्यका रास्ता दिखा रही हैं।

केशव—अच्छा, आत्माकी निर्मलता क्या है? और कैसे प्राप्त की जाती है?

पिता—आत्माकी निर्मलता उस अवस्थाको कहते हैं जब आत्मा और परमात्माके बीच पड़ा हुआ मायाका मोटा पर्दा हट जाता है और आत्मा परमात्माको अपनेमें और अपनेको परमात्मामें देखने लगता है। इसे एक उदाहरणसे और अच्छी तरह समझ सकते हो। जिस प्रकार बर्फ सूर्यके तेजसे प्रकाशित तो हो उठती है, परंतु उसके अंदर सूर्यका कोई प्रतिबिम्ब नहीं दिखायी देता, उसी प्रकार संसारका साधारण प्राणी भी ब्रह्मतेजसे प्रकाशित होकर सचेतन तो बन जाता है, किंतु उसमें बुद्धिका कोई परिष्कार अथवा ब्रह्मदर्शनकी कोई जिज्ञासा नहीं दिखायी देती। परंतु जब वह बर्फ गरमी पाकर गल जाती है और पानीके रूपमें बदल जाती है, तब उसमें सूर्यका प्रतिबिम्ब दिखायी देने लगता है। इसी प्रकार उस प्राणीका मन और बुद्धि भी जिस समय सत्यकी आँचसे प्रतप्त होकर, उचित रूपसे परिष्कृत हो चुकती है तब वह परमात्माके अस्तित्वको साफ तौरसे अनुभव करने लगता है; किंतु फिर भी अभी उसे परमात्मा अपनेसे अलग ही दिखायी देता है, ठीक उसी प्रकार जैसे जलमें सूर्यका प्रतिबिम्ब सूर्यसे अलग जान पड़ता है। पश्चात् जब यह

जल भाप बनकर ऊपरको उठ जाता है, तब सूर्यका वह प्रतिबिम्ब भी गायब होकर सूर्यमें मिल जाता है। इसी तरह उक्त प्राणी भी जब अपनी आत्माको मायाके स्तरसे ऊपर उठा लेता है, तब आत्मा और परमात्माका सारा भेदभाव उसकी दृष्टिमें गायब हो जाता है और वह इस सम्पूर्ण सृष्टिको केवल ब्रह्ममय देखने लगता है। ऐसा ब्रह्मज्ञानी इस संसारमें रहता हुआ भी अपने जीवनको दैवी बना लेता है। वह जहाँ कहीं भी हो, सर्वत्र 'आत्मवत् सर्वभूतेषु' ही उसे दिखायी देता है। अतएव उसका प्राणिप्रेम तथा उदारता अपनी चरम सीमाको पहुँच जाती है।

केशव—इस अवस्थाको प्राप्त करनेका उपाय क्या है ?

पिता—इस दैवी अवस्थाको पहुँचनेकी सबसे पहली सीढ़ी तो सत्यके व्रतद्वारा मनकी शुद्धि ही है, जिसकी चर्चा हम पहले कर आये हैं। फिर उसीके साथ सद्गुरु-सेवा और उनके उपदेश, सद्ग्रन्थोंका अध्ययन, सतत ब्रह्मचिन्तन, भगवद्भजन, योगाभ्यास आदि अन्य उपाय भी हैं; किंतु ये सब अभी तुम्हारी बालक-बुद्धिमें न आयेंगे। अतएव इस विषयको अब यहीं समाप्त करता हूँ और आशीर्वाद देता हूँ कि दैव-कृपासे तुम्हें सब प्रकारसे शारीरिक, मानसिक और आ[illegible] करनेमें पूर्ण सफलता प्राप्त हो।

बालकोंके लिये उपयोगी कुछ पुस्तकें

भगवान श्रीकृष्ण [भाग १]—पृष्ठ-संख्या ६८, बारह सादे तथा एक बहुरंगा चित्र, तिरंगा मुखपृष्ठ, मूल्य ... .३१

भगवान श्रीकृष्ण [भाग २]—पृष्ठ-संख्या ६४, दस सादे तथा एक बहुरंगा चित्र, तिरंगा मुखपृष्ठ, मूल्य ... .३१

भगवान राम [भाग १]—पृष्ठ-संख्या ५२, १ रंगीन, ७ इकरंगे चित्र तथा सुन्दर बहुरंगा टाइटल, मूल्य ... .२५

भगवान राम [भाग २]—पृष्ठ-संख्या ५२, १ रंगीन, ७ इकरंगे चित्र तथा सुन्दर बहुरंगा टाइटल, मूल्य ... .२५

बालचित्र रामायण प्रथम भाग—लीलाके ४८ सादे, १ सुन्दर रंगीन चित्र, साइज १०×७॥, बहुरंगा टाइटल, मूल्य .२५

बालचित्र रामायण द्वितीय भाग—लीलाके ४८ सादे, १ सुन्दर रंगीन चित्र, साइज १०×७॥, बहुरंगा टाइटल, मूल्य .२५

बाल-चित्रमय चैतन्यलीला—पृष्ठ ३६, इसमें १ तिरंगा, ४८ इकरंगे चित्र दिये गये हैं। सुन्दर दोरंगा मुखपृष्ठ, मूल्य ... .३१

बाल-चित्रमय बुद्धलीला—चित्रोंमें, पृष्ठ-संख्या ३६, मूल्य ... .३१

चोखी कहानियाँ—इसमें ३२ कहानियाँ हैं, पृष्ठ ५२, मूल्य .३१

पिताकी सीख—आपके हाथमें है।

बड़ोंके जीवनसे शिक्षा—पृष्ठ ११२, सुन्दर दोरंगा मुखपृष्ठ, मू० .३७

पढ़ो, समझो और करो—पृष्ठ १४८, सुन्दर दोरंगा मुखपृष्ठ, मू० .३७

बालकोंकी बातें—पृष्ठ १५२, सुन्दर मुखपृष्ठ, मूल्य ... .२५

वीर बालक—२० वीर बालकोंके जीवन-चरित्र, पृष्ठ ८८, मूल्य .२५

दयालु और परोपकारी बालक-बालिकाएँ—पृष्ठ ६८, मूल्य .२०

बालप्रश्नोत्तरी—इसमें धर्म-सम्बन्धी २१ प्रश्नोत्तर हैं, पृष्ठ २८, .१०

स्वास्थ्य, सम्मान और सुख—पृष्ठ ३२, मूल्य ... .१०

पता—गीताप्रेस, पो० गीताप्रेस (गोरखपुर)